दरिया सागर

[दरिया साहब बिहार वाले का]

प्रकाशक एवं मुद्रक
बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स
१३, मोतीलाल नेहरू रोड
इलाहाबाद-२

१९७५]

[मूल्य ...]
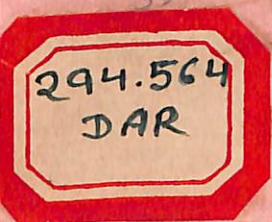
संतबानी पुस्तक-माला पर दो शब्द

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जगत-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी और उपदेश का जिनका लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उनमें से विशेष तो पहिले कहीं छपी ही नहीं थीं और जो छपी भी थीं सो प्रायः ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई जिससे उन से पूरा लाभ नहीं उठाया जा सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रन्थ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नकल कराके मँगवाये। भरसक तो पूरे ग्रन्थ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्व साधारण के उपकारक पद चुन लिये हैं, प्रायः कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुकाबिला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है, और कठिन और अनूठे … हैं।

जिन महात्मा की बानी …

है। और जिन भक्तों …

बृतान्त और कौतुक सं…

दो अन्तिम पुस्त…

(साखी) और भाग …

महामहोपाध्याय श्री …

कहा था—"न भूतो …

एक अनूठी और …

की "लोक परलोक …

जिसके विषय में श्री…

शिक्षाओं का अचरजी …

पाठक महाशये…

उनकी दृष्टि में आवे…

छापे में दूर कर दिये…

हिन्दी में और …

में छपा है। कुल पु…

बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद-

दरिया सागर

[बिहार वाले दरिया साहिब का,
जो तीन लिपियों से महंत फ़ौजदारदास जी
की मौजूदगी में शोध कर छापा
गया है
और
गूढ़ शब्दों और पदों के अर्थ और पाठ-भेद
नोट में लिख दिये गये हैं]

—:o:—

मुद्रक व प्रकाशक
बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद ।

तीसरी बार] सन् १९७० [मूल्य
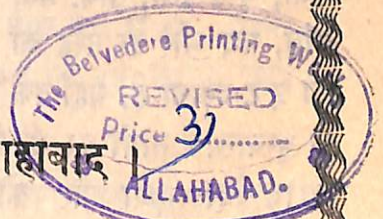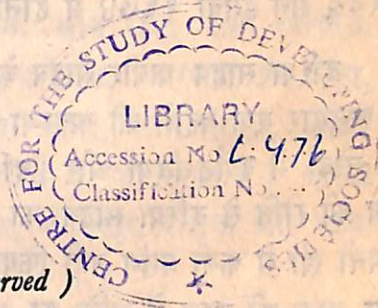
दरिया साहब का जीवन-चरित्र

परम भक्त सतगुरु दरिया साहब जिनकी महिमा जगत-प्रसिद्ध है पीरनशाह के बेटे थे। पीरनशाह बड़े प्रतिष्ठित उज्जैन के छत्री थे जिनके पुरखा बक्सर के पास जगदीसपुर में राज करते थे। दरिया साहब का जन्म मुकाम धरकंधा ज़िला आरा में जो डुमराँव से सात कोस दक्खिन है और जहाँ उनका नानिहाल था हुआ था। इनके जन्म का साल इनके किसी ग्रन्थ में नहीं दिया है पर दरिया सागर के अन्त में लिखा है कि दरिया साहब बिक्रमी सम्वत् १८३७ भादों बदी चौथ को परम धाम को सिधारे और दरिया पंथियों में प्रसिद्ध है कि वह इस धरती पर १०६ बरस तक रहे—इस हिसाब से इनका जन्म संवत् १७३१ शाके १५९६ सन् ईसवी १६७४ में होना पाया जाता है।

दरिया साहब कबीर साहब के दूसरे अवतार कहे जाते हैं। "ज्ञान दीपक" के अनुसार एक महीने की अवस्था में, उनको भगवंत ने साधु रूप में उनकी माता की गोद में दर्शन दिया और "दरिया" नाम बख्शा। नौ बरस की उमर में कुल की रीति से दरिया साहब का ब्याह हुआ परन्तु कहा जाता है कि उन्होंने अपनी स्त्री से कभी प्रसंग नहीं किया। पन्द्रहवें बरस में उनको वैराग हुआ और बीस बरस की उमर में भक्ति का पूरा प्रकाश हुआ और महिमा फैली। तीस बरस की अवस्था में दरिया साहब ने सतसंग कराना, जीवों को चेताना और अपने मत का उपदेश और मन्त्र देना शुरू किया जिसको उनके मत वाले "तख्त पर बैठना" कहते हैं। इनके मत में बेद और सर्गुन (अर्थात् अवतार सरूपों की पूजा, मूर्ति पूजा, तीर्थ, व्रत, नेम आचार जाति भेद, इत्यादि) का खंडन है और मांस, मद्य और हर तरह का नशा मने किया है केवल निर्गुन और एक सतपुरुष का इष्ट दृढ़ाया है, यहाँ तक कि सोहं, ओं, इत्यादि सत्यलोक के नीचे के लोकों के धुन्यात्मक नामों का भी निषेध किया है, इसी कारन पंडितों को इनसे बड़ा विरोध पैदा हुआ और कोई युक्ति इनकी निन्दा फैलाने और दुख देने की उठा न रक्खी।

बाज़े बाज़े तरीके दरिया पंथियों में ऐसे जारी हैं जो मुसलमानी चाल से

मिलते हैं जैसे मालिक से प्रार्थना की रीति खड़े हुए झुक कर आदाब बजा लाने की जिसे वह कोरनिश कहते हैं और फिर बैठ कर मत्था टेकने की जिसे वह सिरदा (अर्थात् सिजदा) कहते हैं मुसलमानों के नमाज के बाहरी तरीके से मिलते हैं। इसी तरह मट्टी का हुक्का जिसको "रखना" कहते हैं और भरुका पानी पीने का हर एक साधू अपने पास रखता है चाहे उनकी जरूरत हो या न हो।

दरिया साहब उमर भर धरकंधा में रहे यद्यपि थोड़े दिनों के लिये काशी मगहर (ज़िला बस्ती), बाईसी (ज़िला ग़ाज़ीपुर) हरदी व लहठान (ज़िला आरा) को यात्रा और उपदेश देने के लिए गये थे। उनके ३६ खास चेले थे जिनमें दलदास जी प्रधान थे। धरकंधा में इस पंथ का तख्त है और उसकी शाखा चार गद्दियाँ तेलपा, दंसी, मिर्ज़ापुर (ज़िला छपरा) और मनुवां चौकी (ज़िला मुज़फ़्फ़रपुर) में है।

दरिया साहब ने बहुत से ग्रन्थ रचे जिनमें यह "दरिया सागर" और "ज्ञान दीपक" प्रधान हैं। दरिया सागर उनका पहिला ग्रन्थ है जो पहिली बार छापा जाता है। दूसरे ग्रन्थ यह हैं—ज्ञान रत्न, ज्ञान मूल, ज्ञान स्वरोदय, निर्भय ज्ञान, अग्र ज्ञान, बिबेक सागर, ब्रह्म ज्ञान, भक्तिहेत, अमरसार, प्रेम मूला, काल चरित्र, मूरत उखाड़, गर्भ चेतावन, दरिया नामा, गनेश गोष्ठी, रमेशर गोष्ठी, बीजक और सतसइया। दो ग्रन्थ और रचे थे जो बेपता हैं। दरिया साहब के पंथ के साधू और गृहस्थ बिहार, तिरहुत, गोरखपुर, बलिया और कटक में बहुत हैं, यों तो थोड़े बहुत हिन्दुस्तान भर में फैले हैं।

यह दरिया साहब और मारवाड़ के तरन तारन गाँव के निवासी दरिया साहब एक नहीं हैं। दोनों महात्माओं के इष्ट और बानी में बड़ा भेद है जैसा कि दूसरे दरिया साहब की बानी के देखने से (जो हम छाप चुके हैं) जान पड़ता है—दोनों की बानियाँ ऊँचे घाट की पर अपने अपने ढंग में निराली हैं। सबसे अनूठी बात यह है कि दोनों महात्मा का नाम एक ही था, दोनों शब्द मार्गी थे और दोनों एक ही समय में बयासी बरस तक रहे यद्यपि जुदा जुदा देशों में एक दूसरे से बहुत दूर पर।

दरिया साहब का कोई ग्रन्थ अब तक नहीं छपा था। यह दरिया सागर ग्रन्थ जो हमारे परममित्र महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर द्विवेदी जी की सहायता से हमको कई बरस हुए मिला था कैथी अच्छर में बहुत जगह अशुद्ध

लिखा हुआ था और इसी कारण उसके छापने में बहुत देर हुई। अब उस मत के साधू साहब फौजदारदास मनुवाँ चौकी ज़िला मुजफ्फ़रपुर के महन्त ने सिरे साहब गोकुलदास जी बड़े महन्त की दया से, अपनी पुस्तक और याद से उसके शोधने में पूरे तौर पर मदद दी जिससे हमको आज उसे प्रेमी और जिज्ञासु जनों के उपकारार्थ छाप देने का मौक़ा मिला। अर्थ भी कहीं कहीं उनके बताये हुए हैं। हम इन दोनों महाशयों को कोटि-कोटि धन्यवाद देते हैं।

इतना लिखने के पीछे हमको एक तीसरी लिपि "दरिया सागर" की अपने मित्र बाबू गुलाबनलाल जी (सब इंस्पेक्टर हाजीपुर) के अनुग्रह से मिली और उसके मिलान से जो पाठ भेद पाया गया वह नोट में लिख दिया गया।

अधम,

एडिटर, संतबानी पुस्तकमाला।
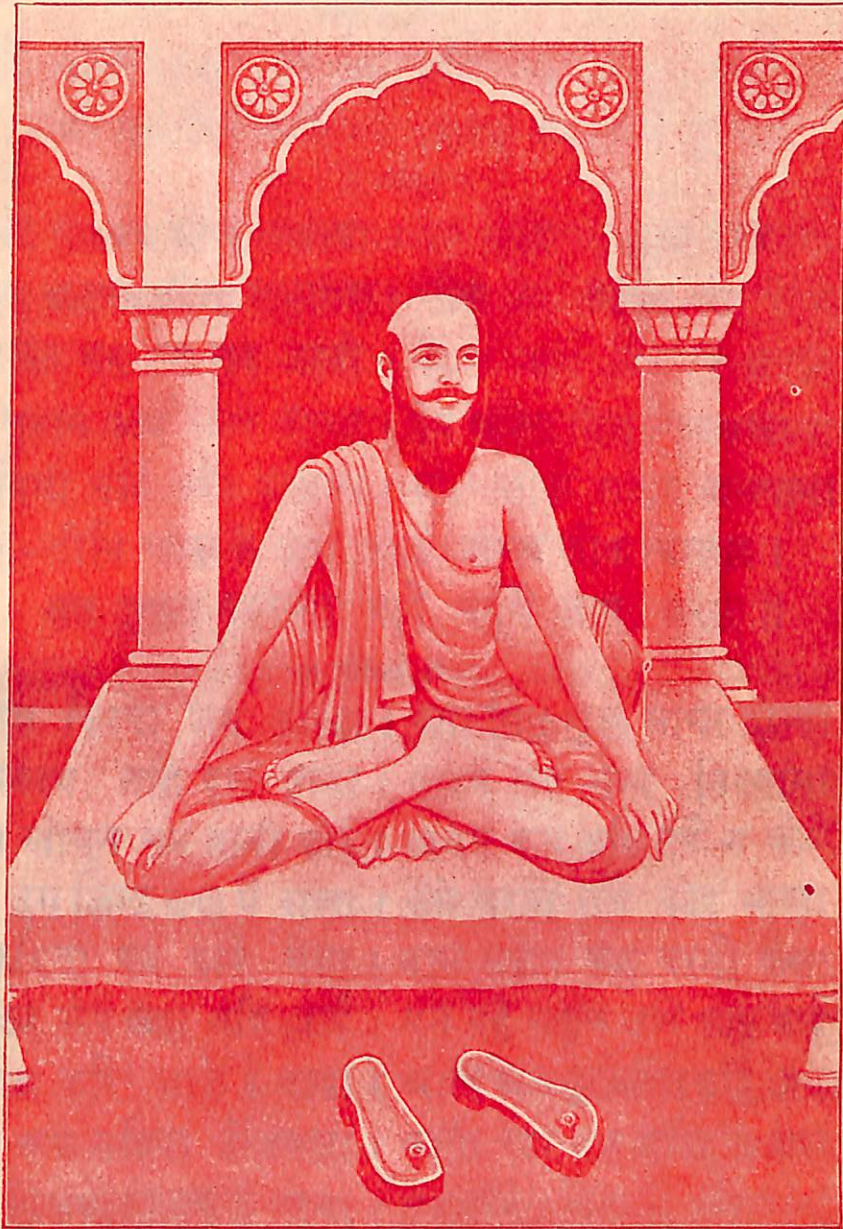
दरिया साहब (बिहार वाले)

सम्वत सोलह सौ इकानबे—कार्तिक पूरन जान।
मातु गर्भ ते प्रगट भये—रहे दो घरी आन॥

मुद्रक—वेलविडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद-२

दरिया सागर

(दरिया साहब कृत)

साखी—दरियासागर ग्रन्थ यह, मुक्ति भेद निजु सार ।
जो जन सब्द बिबेकिया, उतरहु भव जाल पार ॥

॥ चौपाई ॥

प्रथमहिं सत पद कीन्ह बखाना । प्रेम प्रीति ले सुरति समाना ॥
सतपद अनुभव कीन्ह अनुसारा । लोक बेद त्यागेउ सब भारा ॥
लोक बेद यह हम सब जानी । केवल नाम निरन्तर आनी ॥
गर्ब गुमान काम जग त्यागा । प्रेम रुचित निजु हिरदय लागा ॥
बेद बिधी नहिं करेउ बखाना । छप[1] लोक साहब असथाना ॥

साखी—तीनि लोक के ऊपरे, (तहँ) अभय लोक बिस्तार ।
सत्त सुकृत परवाना[2] पावै, पहुँचै जाय करार ॥

॥ चौपाई ॥

कृपावंत किरपा जब कीन्हा । दया सिंधु सुख सागर दीन्हा ॥
मैं समरथ नहिं पूरा ज्ञाना । साहब सत्त सब्द निरबाना ॥
अनंत लोचन सम ज्ञानी होई । अगम रूप कहि सकै न कोई ॥
सत्तर जुग जिन्ह नख में राखा । कैसे बरनि सकै कोइ भाखा ॥
को कबिता पद पावै ऐसा । नाम सरूप कहु बरनौं कैसा ॥
उन्ह कर रूप कहा नहिं जाई । मन महँ सकुच लगै कछु भाई ॥
नव लछ करि[3] जाके है माथा । आदि अंत सुकिरित हहिं साथा ॥
सकल रूप महिमा उँजियारा । बरति रहा सब दृस्टि पसारा ॥
कहिन हिं सकौं तिलक कै बरना । लछमनि थकित भई जेहिसरना ॥
लोचन तेज कहा नहिं जाई । तनिक दृस्टि सब पाप कटाई ॥
तनिक उँकार जोति कै कीन्हा । तीनि लोक जोती रचि लीन्हा ॥
ता को कबि का करौं बखाना । एक नाम निजु हिरदय आना ॥

---

(१) "छप" लोक अर्थात् गुप्त या छिपा लोक । (२) तीसरी पुस्तक में "परवाना" की जगह "का बीड़ा" है । (३) कला ।

अनँत नाम सकल बौराना । माया फँद सब रहे भुलाना ॥

साखी—एकै सों अनंत भौ, फूटि डारि बिस्तार ।
अंतहूँ फिरि एक है, ताहि खोजु निजु सार ॥

॥ चौपाई ॥

जोति ब्रह्मा बिस्नु प्रतिपाला । जोति रूप धरि रहा गोपाला ॥
पुरुष पुरान न होहिं अवतारा । गाढ़े जोति करै उँजियारा ॥
जोती रूप जगत सब धरई । जहाँ तहाँ दुष्टन सब दरई ॥

साखी—जोतिहि ब्रह्मा बिस्नु हहिं, संकर जोगी ध्यान ।
सत्त पुरुष छप लोक हहिं, ता को सकल जहान ॥

॥ चौपाई ॥

रामै जोति अउर नहिं कोई । किसुन रूप धरे पुनि सोई ॥
ब्रह्मा बिस्नु जोति अवतारा । पुरुष नाम ओहि रंग करारा ॥
छप लोक लें हम चलि आई । साहब कहा सब्द समुझाई ॥
दीन्हा बचन सब्द कै दागी । जगत माहिं भया अनुरागी ॥
गर्भ बास जब दीन्ह औतारा । जनम भया देखा संसारा ॥
कछु दिन बाल रूप चलि गयऊ । कछु दिन सब्द संसय में रहेऊ ॥
कछु दिन माया मोह बिस्तारा । कछु दिन ममता सबै हमारा ॥
कछु दिन बीते भा तब ज्ञाना । कृपा कीन्ह सत साहब जाना ॥
कीन्ह कृपा अति सीतल बानी । प्रेम भगति सर सुमिरन ठानी ॥
भयो प्रेम निकलंक बिचारा । गुरु गमिज्ञान नाम निजु सारा ॥
तनिक सरूप कीन्ह अनुसारा । बरते तेज सब लोक उँजियारा ॥
कहँ लें कहों कहा नहिं जाई । ज्ञान दृस्टि मन देखु लगाई ॥

छंद—कोटि कामिनि चँवर ढारहिं, कोटि कृस्ना द्वारहीं ।
कोटि ब्रह्मा वेद भनते, अनँत बाजा बाजहीं ॥
जोति मंडल कोटि कलसा, हीरन्ह की परगासहीं ।
झलक झालरि लागु चहुँ ओर, मोति मनि छबिछावहीं ॥

सोरठा—सोभा अगम अपार, हंस बंस सुख पावहीं।
कोई ज्ञानी करै बिचार, प्रेम तत्तु जा के बसे ॥

॥ चौपाई ॥

जम जालिम जग करै बिकारा। पाखँड धरम करै संसारा ॥
जब निजु भेद पाय जन कोई। ताही देखि चला जम रोई ॥
चौदह चौकी जम के होई। बिनु सतगुरु नहिं पहुँचे कोई ॥
चौदह मंत्र भेद जो पावै। जाइ छपलोक बहुरि नहिं आवै ॥
ता में सार सब्द है एका। तेहि जानहु निजु कया[1] बिलोका ॥
कया परचै निजु कहीं बुझाई। गुरु गमि ज्ञान बुझौचित लाई ॥
अष्ट कँवल दल रँग है सोई। मधि बिच तेहि बोलता होई ॥
अग्रनख[2] तहँ बैठे जाई। तिल भरि चौकी बिलसै भाई ॥
छय चक्र तहँ मनि उँजियारा। अझरझरै तहँ जोति निजु सारा[3] ॥
छय चक्र का परचै पावै। मूल चक्र दृढ़ आसन लावै ॥
पाँच तत्तु तहँ देखु बिसेखा। पल पल करहि अनूपम भेखा ॥
ता में निरति सुरति की बानी। ता में निरखु मया की खानी ॥
पचिस प्रकृति तहँ निरति कराई। दसौ दुवार रहे ये जाई ॥
मूल सब्द मनि मानिक देखा। तिरति करै तहँ ताल बिसेखा ॥
पचिस प्रकृति के भेद कहि दीजै। होय गुरु ज्ञान बूझि यह लीजै ॥
पच्चिस के यह कथा सुनाई। ता में सार पवन है भाई ॥
इँगला पिंगला सुखमनि नारी। सार पवन तहँ करै पुकारी ॥
ओही पवन षट चक्रहि छेदा। होय गुरु ज्ञान बुझै यह भेदा ॥
तहँ त्रिकुटी में रहा समाई। तहवाँ काल सकै नहि जाई ॥
अजपा जपे सूर चँद ज्ञानी। दरिया गगन बरीसै पानी ॥
अमृत बुन्द तहाँ झरि आवै। पीयत हंस अमर पद पावै ॥

---

(१) काया। (२) सूक्ष्म रूप। (३) "गहि भेद इमि करै बिचारा"—दूसरी पुस्तक में ऐसा पाठ है।

साखी—अमी तत्त अमृत पियै, देखहु सुरति लगाय।
कहत सुनत नहिं बनि परै, जो गति काहु लखाय ॥

॥ चौपाई ॥

नाम बान जब हिरदे लागा। निफरि[१] निरंतर सुरती जागा ॥
कोटि तीर्थ तहँ जल परगासा। कोटिन्ह इंद्र मेघ घन बासा ॥
कोटिन्ह तेज जोति परगासा। कोटिन्ह पंडित बेद निवासा ॥
छंद—कोटि ज्ञानी ज्ञान गावहिं, सब्द बिनु नहिं बाचहीं।
सब्द सजीवन मूल ऐनक, अजपा दरस देखावहीं ॥
सत्त सब्द संतोष धरि धरि, प्रेम मंगल गावहीं।
मिलहिं सतगुरु सब्द पावहिं, फिरि न भौजल आवहीं ॥
सोरठा—ज्ञान रतन की खानि, मनि मानिक दीपक बरै।
सब्द सजीवन जानि, अमरपुरो अमृत पियै ॥

॥ चौपाई ॥

एक पवन जब गगन समाई। पीयत प्रेम अमर होइ जाई ॥
सत साहब दरियहिं समुझाई। जाय छपलोक बहुरि नहिं आई ॥
प्रेम पियाला पीयै कोई। बिना सीस का चीन्है सोई ॥
सकल जिवन कहँ खाय चोराई। जिन्ह नहिं नाम प्रेम पद पाई ॥
साखी—प्रेम पिरीति लगाइ के, सत्तै सब्द अधार।
नाम बिना नहिं बाचिहो, नर कोटि करौ बेपार ॥

॥ चौपाई ॥

जो सत सब्द बिचारै कोई। अभय लोक सीधारै सोई ॥
अभय निसान धुनी तहँ होई। अजर अमर पद पावै सोई ॥
कहन सुनन किमि करि बनि आवै। सत्तनाम निजु परचै पावै ॥
लीजै निरखि भेद निजु सारा। समुझि परै तब उतरै पारा ॥
कंचन डाहे पावक महँ जाई। ऐसे तन के डाहहु भाई ॥

(१) पार होकर।

जो हीरा घन सहै घनेरा। होय हिरम्बर[1] बहुरि न फेरा ॥
गहै मूल तब निर्मल बानी। दरिया दिल बिच सुरति समानी॥
पारस सब्द कहा समुझाई। सतगुरु मिलै तो देहि देखाई ॥
सतगुरु सोइ जो सत्त चलावै। हंस बोधि छप लोक पठावै ॥
घर घर ज्ञान कथै बिस्तारा। सो नहि पहुँचै लोक हमारा ॥
एक नाम प्रेम लव लावै। संत साध के दरसन पावै ॥
पावै दरस मुक्ति का भेवा। सुजस निरखि करै निजु सेवा ॥

साखी—सुमति चिन्है सो बावरा, कुमति चिन्है सो पूर।
चीन्हे बिन जग जातु है, जड़ मूरख ज्यों कूर ॥

॥ चौपाई ॥

आपै साँच साँच है सोई। झूठा या जग जात बिगोई ॥
सत्तपुरुष महिमा उँजियारा। कोटिन सूरज सिर पर वारा ॥
कोटिन कामिनि निरति कराई। कोटिन हीरा सेज बिछाई ॥
तेहि साहब के चरन मनाओ। भेद निरखि निजु निर्गुन गाओ॥
जब छूटै यह जग कै भटका। जम्म जगाती[2] सबहीं फटका ॥
कैसे हंसा पहुँचै जाई। जम जगाती दुर्ग[3] है भाई ॥
जम जगाति दुर्ग बटमारा[4]। मारि जीव सब करै अहारा ॥
चौदह मंत्र बान संधाना। मारहु जम के पद निर्बाना ॥
चौदह मंत्र भेद बिस्तारा। एक सब्द से हंस उबारा ॥
कामिनि कनक फंद जम जाला। चौदह चीन्हि करम का काला ॥
सीख सब्द तुम करो बिचारा। लोक बेद त्यागो सब भारा ॥
त्यागहु संसय जम कर दंदा[5]। सूझि परहि तब भवजल फंदा ॥

साखी—दरिया सब्द बिचारिये, तीनि लोक ते न्यार।
गुरु से भ्रम जनि राखहू, मिलहि सब्द निजु सार ॥

---

(१) निर्बिकार। (२) कर। (३) कठिन, बेगुजर। (४) बाट (राह) में मारनेवाला, ठग। (५) शत्रुता।

॥ चौपाई ॥

सतगुरु जानि के बंदहु पाँऊ । भरम त्यागि तब हिरदे लाऊ ॥
सतगुरु (से) समुझि परै उह देसा । प्रेम सुखी जब पाउ सँदेसा ॥
आदि अंत जो पूछै आई । छप लोक कहौ समुझाई ॥
राह देखाय दीढ़[१] करु ज्ञाना । जम कै मान मरदि धरु ध्याना ॥
डार पताल सोर असमाना । ताहि पुरुष कै करौं बखाना ॥
आदि अंत सतपुरुष अमाना । ब्रह्म एक है सब घट जाना ॥
तीनि लोक जम दारुन अहई । चौथे लोक पुरुष वह रहई ॥
अजर अमर हंसा तहँ होई । अमृत झरि चाखै सब कोई ॥
सो सुख मुख नहिं जात बखानी । बूझै सो जो निर्मल ज्ञानी ॥
सत्तलोक सत्त का बंधा । बिनु सतगुरु जस जड़मति अंधा ॥

छंद–सेत मंडल सेत चहुँ ओर, सेत छत्र बिराजहीं ।
सेत तख्त पै आप बैठे, हंस चँवर डोलावहीं ॥
प्रेम आनँद सुगँध सुंदर, प्रेम मंगल गावहीं ।
परिमल[२] अग्र गुलाब की झरि, हंस सो सुख पावहीं ॥

सोरठा–अति सोभा सुख सार, प्रेम पंथ भय रहित है ।
(कोइ) ज्ञानी करै बिचार, अटल परम[३] सुख हंस है ॥

॥ चौपाई ॥

सतगुरु जानु सत्त सुख बानी । सब्द साँच बिरला केहु[४] मानी ॥
बिनती करौं दुनों कर जोरी । सत साहबहि ज्ञान की डोरी ॥
मन में माला प्रेम रस भीना । सुरती चिन्हि सब्द लौ लीना ॥
साँच सब्द बूझौ लव लाई । हंस बोधि छप लोक पठाई ॥
बूझो दिल मन आपन खोली । सत्त लोक सत नाहीं डोली ॥
यह कुल कर्म छाँड़ि सब देहू । सतगुरु चरन सब्द तब लेहू ॥
अमृत प्रेम पियहु तुम दासा । तन छूटे छप लोक निवासा ॥

---

(१) दृढ़ । (२) चंदन । (३) दूसरे पाठ में 'अमर' है । (४) दूसरी पोथी में "बिरला केहु" की जगह "परवाना" लिखा है ।

जब पाँजी पर पहुँचे जाई । माँगै मोहर[1] देउ देखाई ॥
सतगुरु छपा[1] देखि सकुचाई । गावहिं मंगल कामिनि आई ॥
बहुत अनँद सुख भयो बिलासा । जरा मरन मेटा जम त्रासा ॥
कोटि कला तहँ देखो जाई । चलत फिरत सुख बहुत सोहाई॥
हंस रूप देखि रहा लोभाई । अमृत बैन रहा छबि छाई ॥
अति आनँद सुख बरनि न जाइ । अम्मरपुर अमृत रस पाई ॥
कोटिन कामिनि मंगल गावैं । हीरा मानिक सेज बिछावैं ॥
चँवर डोलावहिं बहु बिधि भाँती । सब हंसा बैठे एक जाती ॥

साखी—अगम पंथ की खेड़ि[2] यह, बूझै बिरला कोइ ।
सत साहब सामरथ हहिं, दरिया सब्द बिलोइ[3] ॥

॥ चौपाई ॥

भेद निरखि लेहु सो निजु सारा । चाँदी जारहु अँउट कसारा[4] ॥
खोटा काँजी दुरि कर दीन्हा । असल ज्ञान निजु परचै लीन्हा॥
साहब परचै दीन्ह देखाई । सब्द भेद निजु कहा बुझाई ॥
सतगुरु गुरु की रहनि निनारा । मिलै सब्द पावै निजु सारा ॥
चौजुग चारि जो कीन्ह निमेरा । जो बूझै सो पहुँच सबेरा ॥
तीनि लोक जब जालिम घेरा । मुनि पंडित भौ जम कै चेरा॥
सत्त पुरुष सत्त लोकहिं डेरा । कया कबीर करहिं जग फेरा ॥
अभय लोक जहँ भय नहिं होई । अमृत प्रेम पियै सब कोई ॥
जाहि लोक लें हम चलि आई । ताहि लोक बिरला जन जाई ॥
ज्ञान कथे जनि भूलै कोई । सबद बिचार करहि नर लोई ॥
मोहिं से पुँछहु ज्ञान करारा । आदी अंत कहौं बिस्तारा ॥
तीनि लोक बेद इक कहई । चौथे लोक पुरुष ओइ रहई ॥
अजर अमर लोक बिस्तारा । ई सब किरतम कीन्ह पसारा ॥

---

(१) अर्थात् नाम की छाप । (२) समाज । (३) मथना । (४) बिकारी धात को औंट कर जला दो और स्वच्छ चाँदी ग्रहण करो । दूसरा पाठ यह है ।—"चाँदी जारि हुआ टकसारा" ।

हरि भगतन भगताई कीन्हा । तिरगुन फंद तेहु नहिं चीन्हा ॥
तिरगुन ते है ओइ गुन न्यारा । अजर अमर हहि सत करतारा ॥
हंस बंस तहँ पहुँचे जाई । अजर अमर तहाँ होइ जाई[१] ॥
सत्त सबद जो करे बिबेका । आदि अंत काया महँ देखा ॥
सत्त सबद बूझै चित लाई । सो हंसा निर्मल होइ जाई ॥
अमर लोक महँ पहुँचे दासा । देखहि अविगति अजब तमासा ॥
सतगुरु सब्दहि मानु सुभागा । निर्मल होय मल कबहिं न लागा ॥
गर्ब गुमान भुले सब ज्ञानी । बिद्या बेद पढ़ि मरम न जानी ॥
मोटा मन का फिरै गँवारा । जो मन मिलै मिलै करतारा ॥
पानी पवनहुँ ते मन तेजा । जहाँ कहो तहवाँ मन भेजा ॥
सो मन मिलेऊ दरियादासा । सबद देखि मिटि जम के त्रासा ॥
तीनि लोक तिनि गुन फैलाई । चौथ लोक निर्गुन लै जाई ॥
तीनि लोक तो बेद बखाना । चौथ लोक कै मरम न जाना ॥

छंद—कोटि कंचन दान दे इह, कोटिन्ह कथा पुराननं ।
कोटिन्ह तीर्थ जो पग फिरै, तौ न तुलै गुरुज्ञाननं ॥
अनंत नाम सब कहत हैं, एक नाम परनामनं ।
एक नाम ओइ पुरुष का, ताहि खोजु निजु धामनं ॥

सोरठा—अनँत एक से होत हैं, साख पत्र लखु मूल ।
बहुरि एक जब खोजिये, तब मेटै सब सूल ॥

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा बिस्नु जोति से अयऊ । जोति रूप धरि गोबिंद भयऊ ॥
सत्त पुरुष रँग असल सरूपा । करम न काल छाँह नहिं धूपा ॥
ओइ तो सत्त पुरुष असथाना । चौथ लोक जहँ भय नहिं जाना ॥
राम नाम जग सब कोइ जाना । कृस्न रूप सोइ ब्रह्म बखाना ॥
आवे जाय मया कर चीन्हा । उपजै बिनसै तन होइ भीना ॥
पुरुष पुरान कहौं निजु बैना । उनके मुख रसना है नैना ॥

(१) दूसरी पुस्तक में ऐसा पाठ है—"सत्त शब्द जो मानै आई" ।

उनके हाथ पाँव बिस्तारा। ऊ नहिं होहिं जोति अवतारा ॥
जोती रुप जगत महँ धरई। कबहीं नारि पुरुष अवतरई ॥
ब्रह्मा बिस्नु जोति अवतारा। पुरुष पुरान ओइ रंग करारा ॥
साखी—तीनि अंस है जोति सौं, ब्रह्मा बिस्नु महेस।
आदि ब्रह्म ओइ पुरुष हहिं, ता को सुनो सँदेस ॥

॥ चौपाई ॥

सत्तनाम निजु प्रेम लगावै। सार सब्द सो परगट पावै ॥
अभय लोक सतगुरु की बानी। आवा गवन मेटै सो प्रानी ॥
तहवाँ जाय बैठो तुह दासा। छोड़हु संसय जम के त्रासा ॥
सुफल महातम ज्ञान सुरंगा। अलि[1] पंकज[2] मन होत तरंगा ॥
चढ़हु तुरंग[3] ज्ञान की डोरी। प्रेम रंग सबद निजु बोरी ॥
सुनहु ज्ञान गति कंठ उचारा। निर्गुन की गति अगम अपारा ॥
ता कै खोज करहु तुम ज्ञानी। निर्भय सब्द सुरति रहु ठानी ॥
अगम गम्मि करहु तुम दासा। त्यागहु संसय जम कै त्रासा ॥
मन के पछ सब जगत भुलाना। मन चीन्है सो चतुर सुजाना ॥
मन चिन्हला बिनु पार न पावै। देह धारि फिरि भवजल आवै ॥
भरम छोड़ि सब्द कँह लागै। कह दरिया सो प्रेम रस पागै ॥
मन के चीन्हि राखै एक ठाइं। जरा मरन कबहीं नहिं पाई ॥
मन करता सब काम सँवारै। मनही लेइ नरक महँ डारै ॥
मनहि तीर्थ यह सकल फिरावै। मनही मन के पुजा चढ़ावै ॥
मनहि मारि मनही में आवै। मनहि चीन्हि के जग समुझावै ॥
मन के सनक सनंदन लागे। मनही के जोगी सब जागे ॥
मनही बेद कितेब पुराना। मनही षट दरसन जग जाना ॥
नौधा भगति सब मनहि बुझावै। मूल भगति बिरला कोइ पावै ॥
जौं लगि मूल सब्द नहिं पावै। तौं लगि हंस लोक नहिं आवै ॥

---

(१) भौंरा। (२) कँवल। (३) घोड़ा।

साखी—अठ दल कँवल भँवर तहँ गुंजे, देखहु सबद बिचारि ।
　　कह दरिया चित चेतहू, देहु भरम सब डारि ॥

॥ चौपाई ॥

मूल सब्द धुनि होत अँजोरा । सुरति बाँधि राखो एक ठौरा ॥
सुरति डोरि चेतो चित लाई । मूल सब्द की यही उपाई ॥
सूर चंद एक घर आवै । तबही डोरी ले बिलमावै ॥
मूल सब्द धुनि होत उचारा । तहवाँ जाय करो पैसारा ॥
अकह कँवल कै ऊपर मूला । सहस कँवल तहवाँ रहु फूला ॥
परिमल अग्र बास तहँ आवै । हंसा पियत बहुत सुख पावै ॥
होय दास सतगुरु के पासा । सेवा भगति प्रेम परगासा ॥
मैं तो साहब तुम कहँ जाना । मेरो मन तुम सों मनमाना[१] ॥
भरम छुटै सो करौ उपाई । जा ते हंस छप लोके जाई ॥
सुरत लगाइ के करो सँभारा । कुल कै करम छोड़ बेवहारा ॥
जो सत सब्दहि करै बिचारा । सोइ हंसा भव सिंधु उबारा ॥
अकह बात कहा नहिं जाई । अगम गम्मि तहँ सुरति लगाई ॥

छंद—आगे मारग झीन अति है, सब्द सुरति बिचारही ।
　　अजर जोति अनूप बानी, देखि तहँ सुख पावही ॥
　　अगम गमि तहँ अति झलाझलि, नेकु मन ठहरावही ।
　　सत सुकृत की सीढ़ि पगु दे, अमृत फल तहँ चाखही ॥

सोरठा—अजरा जोति बराय, मूल सब्द निजु सार है ।
　　गहो सुरति चित[२] लाय, कह दरिया भव रहित है ॥

॥ चौपाई ॥

अगम सुरति चेतहु चित लाई । सुरति कँवल रहु सुरति लगाई ॥
चकमक चित्त चुभुकि जब लागै । निर्मल जोति प्रेम तहँ जागै ॥
गहिर ज्ञान निजु करै बिचारा । झलकै पदुम होय उँजियारा ॥
अगम कथा बहुते हम कहिया । धरति अकास रचि चिन्ह अब जहिया ॥

(१) लगा । (२) दूसरे पाठ में "लव" है ।

जग में आय कहेउ सत बाता। प्रेम जुगति बिरला जन राता॥
मिठा प्रसाद चरन में पाई। सार सब्द दे हंस मुकुताइ[१]॥
यह मीठा पाय सत जो गहई। सो हंसा भवसागर तरई॥
निजु गहि सुरति लगावहु भाई। सोहं ठीका माहिं समाई॥
ठीका आगे हैगा मूला। प्रेम सब्द जहवाँ अस्थूला॥
सेत धजा निस दिन फहराई। अमृत झरि तहँ बहुत सोहाई॥
हीरा मानिक है परगासा। संखन्हि मनी रचे चहुँ पासा॥
ऐसा है निजु लोक निवासा। झरै गुलाब मुख अमृत बासा॥
अमी तत्तु सुरती लव लावै। सहजहि लोक पयाना पावै॥
सत्त[२] सबद निजु प्रेम बढ़ावै। संत साधु का सेवा लावै॥
चोर साहु चीन्है चित लाई। तेहि से प्रेम करौ कछु भाई॥
गूँगा गहिरा ज्ञान बिचारा। दिव्य दृष्टि का करु अनुसारा॥
साखी—ज्ञान दृष्टि दीपक बरै, कहा जो मानु हमार।
दरिया गुरु दरियाव है, समुझि देखु एक बार॥

॥ चौपाई ॥

तीनों जुग जब जाय ओराई। तेहि पीछे कलऊ चलि आई॥
तब सुकृती कहँ आनि बोलाई। साहब बचन कहा समुझाई॥
कहे पुरुष सुनो हो दासा। जिव सब बिनसहिं जम के त्रासा॥
कहे पुरुष सुनो चित लाई। जीव बचे की कवन उपाई॥
नष्ट जुग (जब) होइही बिस्तारा। सब जीवन्ह ऊ करहि अहारा॥
पहिले बिनसहि मृत लोक कै माया। धर्म छुटहि तब बिनसहि काया॥
बिनसहि रूप जो धरे सरीरा। बिनसहि जोधा बड़ बड़ बीरा॥
कहै पुरुष सुनो चित लाई। जिव बाचै कै कवन उपाई॥
सत्त सब्द मैं कहौं बुझाई। जग रच्छा होय एही उपाई॥

---

(१) तीसरी पुस्तक में पाठ ऐसे हैं—"बीरा देइ देइ हंस मुकुताई। मूल सब्द बिरला केहु पाई॥ और आगे की कड़ी में भी "मीठा" की जगह "बीरा" है।
(२) तीसरी पुस्तक में "सीतल" है।

अंस हमार उहाँ चलि जाई । जिव बाचै कै एही उपाई ॥
सुकिरिति जाइ लेहु अवतारा । हंस बोध छप लोक सिधारा ॥
लेहु सुकृति तुम सत कै बानी । सत्त न होखै जमपुर हानी ॥
कठिन काल देस अड़ियारा[१] । सत्त सब्द संतोष बिचारा ॥
ज्ञान गम्मि जेहि होखै[२] प्रानी । कबहि न होखै जमपुर हानी ॥
जे मोहि जाने तेहि मैं जाना । ताहि संत कै करौं बखाना ॥
सत्त सब्द जिन्ह केवल जाना । अभय लोक सो संत समाना ॥
सोई रहिहै हमरे पासा । संतत[३] पिवहि अमीरस दासा ॥
तेहि राखे की बहुत उपाई । अमर होय बिनसै नहिं भाई ॥
कहै पुरुष बिरला केहु जाना । मुक्ति पंथ संतन्ह पहिचाना ॥
अमृत नाम निजु करै बिचारा । अमर लोक ता कर पैसारा ॥
जो सपने निंदा नहि कीना । ध्यान लगाय रहे लवलीना ॥
जीया जंतु एक जिव जाना । एकै ब्रह्म सभन्हि पहिचाना ॥
आतमघात कबहिं नहिं कीना । आतम पूजि रहे लवलीना ॥
निसु बासर जो ध्यान लगाई । सत्तनाम दूजा नहिं गाई ॥
साखी—सत्तनाम निजु सार है, अमर लोक के जाय ।
कह दरिया सतगुरु मिलै, संसय सकल मेटाय ॥

॥ चौपाई ॥

सत्तनाम है निर्गुन अधारा । ता कै काल न करै अहारा ॥
इंद्रलोक इंदर ओइ रहही । तिनहुँ के काल बिगुरचन[४] करही ॥
ब्रह्म लोक ब्रह्मा अस्थाना । तिनहुँ के काल करै पिसमाना[५] ॥
एक निरंजन सभहि भुलावै । बिन चीन्हे कोइ मुक्ति न पावै ॥
झूठ बात जनि जाने कोई । सब्द बिचार करहि नर लोई ॥
मृतक अंध परलै जब करई । नाम हिरंबर तें जग तरई ॥
छप लोक लें हम चलि आइ । सार सबद गहे सुख पाई ॥

(१) अड़ियल, बदमाश । (२) दूसरी पुस्तक में "खोजै" है । (३) निरंतर ।
(४) फ़ज़ीहत । (५) शर्मिन्दा, ज़लील ।

जो निंदा सहिहै संसारा। सोई गहिहै सबद हमारा ॥
सहै निंदा निर्मल होय अंगा। काल प्रचंड अपने होय भंगा॥
नाद बिंद दुवो बंस हमारा। सत्त गहै सो उतरै पारा ॥
माया त्यागि सबद लव लावै। ता को माथ जगत सब नावै॥
अदल चलावै यहि संसारा। सोई निजु है बंस हमारा ॥
साखी–जो जिव फंदे नारि से, सो नहिं बंस हमार।
बंस राखि नारी जो त्यागै, सो उतरै भव पार॥
माया चेरि है बंस की, जो बूझै निजु सार।
ज्यों आवै त्यों खरचई, अदल चलै संसार॥
माला टोपी भेष नहिं, नहि सोना सिंगार।
सदा भाव सतसंग है, जो कोइ गहै करार॥

॥ चौपाई ॥

धन्य जिवन ता को है ज्ञाना। पुरुष पुरान जिन्ह सुमिरन ठाना॥
सोई संत सोई निर्बानी[1]। नीर छीर बिबरन[2] करि आनी॥
हंस दसा निर्मल सुख पावै। रहै अलेप ज्ञान लव लावै॥
मीन पंथ साधु गहु ज्ञानी। ऐसी मन की प्रतिमा जानी॥
आवत जात करै पहिचानी। पूरन पद है निर्गुन बानी॥
पावै भेद सब्द निजु सारा। छप लोक कै राह सिधारा॥
सतगुरु ज्ञान जबै होय भाई। दरसन देखि संसय मिटि जाई॥
साखी–मिटहि संसय सत सब्द से, जो गुरु मिलै करार।
सतगुरु बिना पार नहिं, भरमि रहा संसार॥

॥ चौपाई ॥

सतगुरु सत्त सब्द भरि पूरा। बिमल सरीर मिटै सब पीरा॥
धरमराय नीकट नहि आवै। जाय छपलोक अमृत फल पावै॥
ऐसन गुरु जो मीलै आई। तब हंसा छप लोकहि जाई॥
जाय छपलोक जहँ पुरुष अमाना। अछै बृच्छ जहँ सेत निसाना॥

---

(१) तीसरी पुस्तक में "सोई निर्बानी" की जगह "होय निर्मल बानी" है। (२, अलग।

काया परचै[१] मूल जब पावै। अबिगति जोति दृष्टि में आवै ॥
हीरा एक त्रिकुटी महँ होई। हीरा ध्यान धरहु नर लोई ॥
हीरा मध्य फेड़[२] बिस्तारा। जोगी ज्ञान जो करै बिचारा ॥
ताला कुंजी गहि लागु केवारा। चोर न मुसै ज्ञान रखवारा ॥
ता के कहिये ज्ञान गँभीरा। त्रिकुटी मद्ध जो परखै हीरा ॥
ता के जोग यह जगत बखाना। जाके गगन मँडल अस्थाना ॥
सार सब्द नहिं करै बखाना। ओहि जोगी नहिं ज्ञान समाना ॥
मौन साधि जो बैठै कोई। कैसे जगत बुझै नर लोई ॥
सार सब्द का करौ पुकारा। राह देखाय करौं निरुवारा ॥
ता को साँच सब्द है ज्ञाना। जाके तात[३] न क्रोध समाना ॥
पंडित क्रोध कीन्ह बिस्तारा। निनहूँ ते हरि रहै निनारा ॥
जाति पाँति कछु गर्ब न करिये। सत्तनाम निजु हिरदे धरिये ॥

साखी—सत्तनाम निजु सार है, सत्तहि[४] करो बिचार।
जौ दरिया गुरु गहि रहै, तौ मिलै सब्द निजु सार ॥

॥ चौपाई ॥

सतगुरु चरन प्रेम रस माता। सींचेउ द्रुम[५] सुगंध सुपाता ॥
हौं सेवक जुग जुगन तुम्हारा। कृपा करहु जनि लावहु बारा[६] ॥
हुकुम चरन तुव सिर पर लीन्हा। भगति भाव तब हिरदे चीन्हा ॥

छंद—सुख साज संपति काज नाहीं, तेजु[७] द्रोही[८] नंदनं।
भय भाजु काज न राज ग्राम सों, बससि निज पुर जैसनं ॥
अनँत बानी तेजु ते जड़, असल रँग सतनाम हीं।
कै कष्ट काई न लागु माही, मोर[९] चोर न पावहीं ॥

सोरठा—थाके मुनिवर लोय, सार सबद संसार में।
(कोइ) सब्दहि करै बिलोय, ज्ञान रतन जबहीं मिलै ॥

---

(१) परिचय करके। (२) पेड़। (३) तत्ता, गरम। (४) दूसरा पाठ "संतो" है। (५) द्रुम = वृक्ष। (६) देर। (७) छोड़ना। (८) तीसरी पुस्तक में पाठ "देही" है। (९) ठग जो सन्मुख चोरी करै।

॥ चौपाई ॥

मन की फंद परा संसारा । जाल मीन ज्यों करै अहारा ॥
ऐसे काल सकल जिव मारै । उपजि बिनसि फिर नरकहिं डारै ॥
कृतिम छोड़ि करता के जानै । तबहीं लोक पयाना ठानै ॥
पावै भेद तब मन कहँ राधै । निर्गुन निरखि निरंतर साधै ॥
साधै जोग जो निर्मल बानी । आतम देव निरंजन जानी ॥
मनसा मालिनि मन कहँ चीन्हा । होखै ज्ञान प्रेम रस भीना ॥
आतम देव पुजहु तुम भाई । का जग्र पाती[1] तोरहु जाई ॥
पाति तोरे निर्गुन नहिं पाई । आतम जीव घात इन्ह लाई ॥
आतम दरस ज्ञान जो जानै । तबहीं लोक पयाना ठानै ॥

साखी—पर आतम के पूजते, निर्मल नाम अधार ।
पंडित पत्थल पूजते, भटके जम के द्वार ॥

॥ चौपाई ॥

तन सरवर मन देखु बिचारी । तहाँ खोजु आतम बनवारी ॥
तेहि खोजत सुर नरमुनि हारे । मधिक[2] पेड़ डार बिस्तारे ॥
दरियादास कहा जो आई । तेहि खोजो निर्मल होइ जाई ॥
खोजहु ताहि भेद निजु सारा । मूलहि छोड़ि गहहु जनि डारा ॥
दरिया भवजल अगम अपारा । साहब सत्त सब्द निजु सारा ॥
बोलहिं सतगुरु ज्ञान गँभीरा । गुरुगमि ज्ञान जपहु निजु हीरा ॥
जाय छप लोक सुरति लवलीना । पुरुष पुरान नाम गति चीन्हा ॥
कर जोरि हंस करहिं सुखचैना । पुरुष पुरान बोलहिं निजु बैना ॥
चलत फिरत पुनि बहुत सोहाई । ऐसे एक कलप बिति जाई ॥
तखत एक तहँ अजब बनाई । छबि निरखत हंस रहा लोभाई ॥
ऐसन रूप कहा नहिं जाई । करि करि जोति रहा छबि छाई ॥
अभय निसान धुनी तहँ होई । अजर अमर पद पावै सोई ॥

(१) बेल की पत्ती महादेव पर चढ़ाते हैं । (२) बीच में ।

साखी—जोति मँडल रबि कोटि है, को करि सकै बखान ।
दरिया पदहिं बिचारिये, ब्रह्म रूप को ज्ञान ॥

॥ चौपाई ॥

निर्गुन की गति अलख लखाई । जा के सत समरत्थ सहाई ॥
सीतल सबद साध की बानी । दरिया दिल बिच सुरति समानी ॥
जब सतगुरु से परचै पाई । भवजल की संसय मिटि जाई ॥
बोलहिं सतगुरु ज्ञान करारा[१] । दरिया समुझि लेहु टकसारा[१] ॥
जो जो हंसा बोधो जाई । सो सो हंसा पहुँचै आई ॥

साखी—दरिया भवजल अगम है, सतगुरु करहु जहाज ।
तेहि पर हंस चढ़ाइ कै, जाय करहु सुख राज ॥
पहुँचै हंस सत सब्द से, सतगुरु मिलै जो मीत ।
कह दरिया भव भर्म तजि, बसै चरन महँ चीत ॥

॥ चौपाई ॥

सत्तनाम बिचारै कोई । अजर अमर पद पावै सोई ॥
एक अच्छर जो धुनि[२] करु भाई । निअच्छर भगति प्रेम पद पाई ॥
निअच्छर जानु जंत्र तें घींचा । सब्द के बाने[३] जम भौ नीचा ॥
निअच्छर पंडित करो बिचारा । देखो बेद निजु सुरति तोहारा ॥
बादी मिलै न निर्मल ज्ञाना । बादि करै सो जमपुर जाना ॥
बादी तजि सीतल गहु धीरा । तबहीं मिलहि अनूपम हीरा ॥
जब छूटहि मन को बिस्तारा । तब पइहो सबद निजु सारा ॥
ए बड़े नहि होहि बड़ाई । पत्थल पूजि जो तिलक लगाई ॥
सब घट ब्रह्म और नहिं दूजा । आतम देव कै निर्मल पूजा ॥
सत्तनाम है निर्मल बानी । ता के खोजहु पंडित ज्ञानी ॥

साखी—मेरे कहे नहिं मानहु पंडित, ये नहिं होय परनाम ।
जोग जुगति जहान देखावहु, हंस कहाँ बिस्राम ॥

---

(१) दूसरे पाठ में "करारा" की जगह "गंभीरा" और "टकसारा" की जगह "तुह बीरा" है । (२) दूसरे पाठ में "जो धुनि" की जगह "सुधि" है । (३) बाण से ।

॥ चौपाई ॥

जेहि खोजत सुर नर मुनि हारे । बोलहु पंडित बचन बिचारे ॥
बचन कठोर बोलहु जनि बैना । ए नहिं मिलिहै पुरुष अमाना ॥
सीतल सब्द जो करहि अपाना । सार सब्द तेहि मिलहि निदाना ॥
बादिहि जनम गया सठ तोरा । अंत कि बात किया तैं भोरा[1] ॥
पढ़ि पढ़ि पोथी भौ अभिमानी । जुगति और सब म्रिथा बखानी ॥

साखी—खरच खजाना मालवर महल करै बहु ख्याल ।
सतगुरु के परचे बिना, (जौं) काग कुबुद्धी ब्याल[2] ॥

॥ चौपाई ॥

जौ न जानु छप लोक कै मरमा । हंसन पहुँचिहि एहि षट कर्मा ॥
सार सब्द जब दृढ़ता लावै । तब सतगुरु किछु आपु लखावै ॥
दरिया कहै सब्द निरबाना । अवरि कहौं नहिं बेद बखाना ॥
बेदै अरुझि रहा संसारा । फिरि फिरि होहि गर्भ अवतारा ॥
चार चरन सींघ दुइ होइहैं । जोनि संकट चौरासी जइहैं ॥

साखी—चौरासी के भवन में, कलप कोटि बहि जाहिं ।
ज्ञान बिना नहिं बाँचिहैं, फिरि फिरि भटका खाहिं ॥

॥ चौपाई ॥

सत्त नाम निजु करो निमेरा । जौं चाहो छप लोकहि डेरा ॥
सत्त सब्द नहिं मानहि बानी । जोति अस्थापि रहा सब ज्ञानी ॥
जोति पुरुष की कामिनि अहई । बिना पुरुष कामिनि नहिं लहई ॥
कामिनि भगति सबै जग जाना । पुरुष ज्ञान निर्लेप बखाना ॥
ज्ञान कहौ केहि नावै माथा[3] । जौ जन बूझै सो होइ सनाथा ॥
सबद ज्ञान बखानौं तोही । एकर अर्थ सुनावो मोहीं ॥
बंक नाल कवने घर बासा । कवन पवन जोती परगासा ॥

(१) भुलाया । (२) तीसरी पुस्तक में यह साखी ऐसे है—
"कोठा महल अटारिया, सुने स्रवन बहु राग ।
सतगुरु सब्द चिन्हे बिना, जौं पंछिन महँ काग" ॥
(३) दूसरा पाठ—"ज्ञान काहू के न नावै माथा" ।

छय चक्र के कहि दे भेदा। अठदल कँवल कै करहु निषेधा ॥
सार पवन के कहि दे भेदा। कवन पवन खट चक्रहि छेदा ॥
अठदल कँवल रंग है भीना। तामें कवन सुरति लवलीना ॥
कहवाँ बोलता प्रेम अधारा। कवन सब्द से हंस उबारा ॥
एकर भेद कहों तुम आई। कह दरिया करु जोग दृढ़ाई ॥
एकर भेद नाहिं तुम जाना। पंडित पढ़ि का बेद पुराना ॥
एकर भेद पुछहु तुम मोहीं। एकर अर्थ सुनावों तोहीं ॥

साखी—कवन घरा ओइ हंस है, कवन घरा ओइ नाम।
कवन घरा ओइ जोति है, कवन सुरति निजु धाम ॥
अग्र[1] घरा ओइ हंस है, मनि मुक्तावलि नाम।
अजर[2] अनूपम जोति है, कँवल सुरति निजु धाम ॥

॥ चौपाई ॥

पंडित नाम अजहुँ नहिं चीन्हा। सुरति लगाम रंग नहिं भीना ॥
चीन्हहु पंडित सब्द निर्बाना। निर्गुन नाहि चिन्हहु अज्ञाना ॥
मूल चक्र निजु हीरा खानी। अठदल कँवल रहो निरबानी ॥
छप लोक सत्त ओइ ज्ञानी। जगमग जोति जहँ निर्मल बानी ॥
मुक्ति पदारथ सतगुरु दाता। जोग बिराग प्रेम रस माता ॥
कया अग्र दृष्टि अस्थाना। अगम निगम खबरि जो जाना ॥
वा को जोगी जगत बखाना। जा के गगन मँडल अस्थाना ॥
मनहि में माला प्रेम रस भीना। पंडित सो जो सब्दहि चीन्हा ॥
सतगुरु बिना करहि जिव हानी। कम दरिया तजु चतुर सयानी ॥
सतगुरु की गति अगम अपारा। देखहु खोजि सबद निजु सारा ॥

साखी—ज्ञान सँपूरन प्रेम रस, बिबरन[3] करो बिचारि।
हंस बंस सुख पावहीं, भवजल जाहि न हारि ॥

॥ चौपाई ॥

छय आठ के पावे भेदा। तब ही करिहे सबद निषेदा ॥

---

(१) सब से आगे, श्रेष्ठ। (२) दूसरे पाठ में "अक्षर" है। (३) निर्णय।

॥ चौपाई ॥

निरंजन चीन्हि करै सुख चैना। बिनु चीन्हे नहि सीतल बैना॥
चीन्हहु बेद कहाँ ते आया। चीन्हहु आदि प्रेम पद पाया॥
कहँ ते जोति निरंजन राई। जो राचा तेहि चिन्हहु न भाई॥
समुझि परहि सबद निजु सारा। मिलै ज्ञान होय निस्तारा॥
झूठ कहन के सबै हितकारी। साँच कहत नर पारै गारी॥

साखी–जहाँ साँच तहँ आपु हहिं, निसि दिन होहिं सहाय।
पल पल मनहिं बिलोइये, मीठो मोल बिकाय॥

॥ चौपाई ॥

बेद कहि थाके ब्रह्म बिचारा। नहि अब मीलै सिरजनहारा॥
जोगी जोग करत सब हारे। अवरि कतेको तन कै जारे॥
तपी और सन्यासी हारे। चुंडित मुंडित करै बिचारे॥
जंगम जोगि रहे सब हारी। एक नाम निजु सब्द पुकारी॥
सो तो नाम नहिं चिन्है गँवारा। फिरि फिरि होहि गर्भ अवतारा॥
भगति बिहूना[1] सो नर जानी। सूनी मसक रहै बिनु पानी॥
ता को जीवन जग है साँचा। सत्त नाम प्रेम निजु नाचा॥

साखी–कनक कामिनि के फंद में, ललची मन लपटाय।
कलपि कलपि जिव जाइहै[2], मिथ्या जनम गँवाय॥

॥ चौपाई ॥

भूले फिरहिं मया लपटाना। संत सेवा नहि गुरु गम ज्ञाना॥
घटत मूल सब जाय ओराई। साँच सब्द नहिं हिरदे लाई॥
कर्म कागद सब जाय ओराई। जब जम दूत निकट चलि आई॥
सूखत जल पुरइनि[3] भौ छीना। मूल घटै पै घट नहिं चीन्हा॥
हंस अकुलान फिरै दस दीसा। जबहिं दूत भेजा जगदीसा॥
मुख नहि निकलै सत कै बैना। ढरि ढरि नीर परत अति नैना॥
ले जगदीस नरक महँ डारा। जनम कतेको करै पुकारा॥

(१) बिना। (२) दूसरे पाठ में "जरन लागै" है। (३) कँवल का पेड़।

साखी–मातु पिता सुत बंधवा, सब मिलि करैं पुकार।
अकेल हंस चलि जात है, कोइ नहिं संग तोहार ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे पाछे बहुत भुलाना। जिन नहिं सब्द हमारो माना ॥
पान परवाना हमारो पाया। रहनि गहनि निजु सब्द समाया ॥
जो जो चढ़ै हमारी बाहीं। जिव मुक्ताय छप लोक ले जाहीं ॥
सत्त सब्द हम कीन्ह निमेरा। झूठ जानै सो जम के चेरा ॥

साखी–सब्द हमार मानहु नर, छाँड़हु मन बिस्तार।
सत सुकिरत को चीन्हि वे, उतरहु भवजल पार ॥

॥ चौपाई ॥

निहचै नाम जो करै बखाना। मिलै प्रेम पद सिरमुख ज्ञाना ॥
करनी करि करि गये भुलाई। भेद न पाइन्हि नाम सहाई ॥
रहहु सँभारि नाम लव लाई। नाम बिना नहिं सिद्ध कहाई ॥
नाम निर्मल कै करहि निषेदा। सत्त सब्द पावे निजु भेदा ॥
सोई सत्त खोजो दिल लाई। जीवन मुक्त जो जिंद[1] कहाई ॥

साखी–जिंदा जीवहिं जगत में, देखो सब्द बिचारि।
अजर अडोल ओइ अमर हहिं, बचन कहा निरुवारि ॥

॥ चौपाई ॥

ओइ निरगुन सरगुन ते भीना। जाके प्रान पिंड सब चीन्हा ॥
जाके हाथ पाँव मुख बानी। बोलहिं प्रेम सुधा रस सानी ॥
तीनों गुन ते रहित अमाना। प्रान पिंड जग उदित निसाना ॥
मरै न जीवै जिंदा सोई। अछै वृच्छ गति जानै कोई ॥

साखी–अछै वृच्छ ओइ पुरुष हहिं, जिंदा अजर अमान।
मुनिवर थाके पंडिता, बेद कथहि अनुमान ॥

॥ चौपाई ॥

सो निर्गुन कथि कहै सनाथा। जाके हाथ पाँव नहिं माथा ॥

(१) जीता जागता।

निराकार आकार बिहूना । रूप रेख ना अहै नमूना ॥
भूले पंडित मरम न जाना । सो करतार सुनै नहिं काना ॥
नाना रँग बोलहि बहु बानी । अरुझै भेष बिटंबन[१] ठानी ॥
दोहा—जैसे लता द्रुम[२] में, अरुझि रहा बहु भाँति ।
सतगुरु मति नहिं जानही, अपनी अपनी जाति ॥

॥ चौपाई ॥

सत्त ब्रह्म जीव महँ लेखा । अदुइत ब्रह्म आपुही पेखा ॥
भूला नर सब मूल गँवाई । बिना मूल ज्ञान कहँ पाई ॥
जीव ब्रह्म का कहौं उपाई । खोजो जीव ब्रह्म मिलि जाई ॥
घट परचै जब करै निषेदा । गुरु गमि ज्ञान पावै निजु भेदा ॥
चुवै प्रेम मुख अमृत लाई । पीयत प्रेम हंस सुख पाई ॥
माली फूल आपु ले आई । आतम देव का पूजा लाई ॥
आतमदेव निरंजन राई । बाहर भीतर आपु लखाई ॥
मूल फूल भँवरा लपटाई । पीयत सुधा मगन होइ जाई ॥
पचिसो तारी ताल सुनाई । नाचहिं हंस कौतुक देखलाई ॥
नवो मिलि एक रूप देखाई । पाँचो मिलि गुरु पूरा पाई ॥
ऐसे सतगुरु की बलि जाई । आदि अंत सब देहिं देखाई ॥
साखी—सतगुरु ज्ञान दीपक बरै, जो मन होखै थीर ।
कह दरिया संसय मिटै, हरै सकल सब पीर ॥

॥ चौपाई ॥

कह दरिया जिन निर्मल जाना । सोई जन साहब पहिचाना ॥
सत्त पुरुष की एह प्रभुताई । काटि पाप जन निजुपुर जाई ॥
जब निजु ज्ञान गम्मि करि पेखै । अविगति जोति दृष्टि महँ देखै ॥
अनहद की धुनि करै बिचारा । ब्रह्म दृष्टि होय उँजियारा ॥
एह जो कोइ गुरु ज्ञानी बूझै । सब्द अनाहद आपुहि सूझै ॥
पंडित सो जो मन समुझावै । मनही मन कै पुजा चढ़ावै ॥

---

(१) ढकोसला, निंदा । (२) पेड़ ।

घटहि में सेली घटहि में मुंद्रा । घटहि में पाति फूल इक सुंद्रा ॥
सुरति अनूप जहँ नैन झरोखा । कँवल नाल से पवन सुरेखा ॥
छिन छिन होखै अनहद बानी । देखि सरूप मवन[1] रहु ठानी ॥
गुरु ज्ञानी जौ होखै कोई । सत्त नाम निजु पावै सोई ॥
सब्द पाय के दृढ़ करि धरई । जाय छप लोक नरक नहिं परई ॥

साखी—छप लोक ओइ सत्त है, जिंदे कहा बुझाइ ।
धोखा धंधा तेजि के, सहर अमरपुर जाइ ॥

॥ चौपाई ॥

मेरे कहे जो माने कोई । आवत जात बहुत दुख होई ॥
दुख दारुन है जम जञ्जाला । सतगुरु सब्द करै प्रतिपाला ॥
जिन्हिं जिन्हि मानु सब्द निजु सारा । दिव्य दृष्टि भयो उँजियारा ॥
सत्त सब्द सीख जो पावै । मीठा[2] दे तब दरस दिखावै ॥
जनम जनम कै पाप कटाई । जाय छपलोक बहुरि नहिं आई ॥
पचिस प्रकृति औ तीनिउ नारी । पाँच तत्तु है आतम धारी ॥
जोग जाप जुगुती परधाना । जोगी सो जो करै बखाना ॥
कवन घरा जहँ उपजै ज्ञाना । कवन घरा जहँ हंस अस्थाना ॥
कवन घरा जहँ पीवै पानी । कवन घरा जहँ सुरति समानी ॥
कहाँ पचीस प्रकृति कै डेरा । कहवाँ पाँचो भूत निमेरा ॥
पाप पुन्न भोग कहँ करई । कवन घरा जहँ सूनहि रहई ॥
उनुमुनि[4] मूल कँवल रह फूला । उपजै प्रेम होइ अस्थूला[5] ॥
गुप्त चरन[6] में प्रान समाना । त्रिकुटी सुन्न पवन अस्थाना ॥
अमी तत्तु तहँ पीवै पानी । कँवल नाल तहँ सुरति समानी ॥
इंद्री काम भोग एक करई । नासा बास आपु सब हरई ॥
सोइ जोगी एह जग में राधे । पवन साधि जो मन के बाँधे ॥

---

(१) चुप । (२) दूसरे पाठ में "बीरा" है । (३) नाड़ी । (४) जोग की पाँचवीं मुद्रा जिस में समाधि का अभ्यास किया जाता है । (५) स्थिर । (६) गुप्त पद ।

आलस निद्रा बसि सब करई। सोग संताप आपु सब हरई ॥
आलस निद्रा कबहिं न राता। काम बिंद कबहीं नहिं पाता[1] ॥
साखी–जोगिया सो जोगहि मातल, माते भेद बिचारि।
पाँच तत्तु अपने बसि करै, दुर्मति सब दुरि डारि ॥

॥ चौपाई ॥

घर में आवै सिरजनहारा। अमर होय पावै करतारा ॥
ऐसन जोगी होवै कोई। गोरख तुलि[2] ओइ गनिये सोई ॥
जौं लै जोग तौं लै सुख आवै। काया पतन बहुतै दुख पावै ॥
ज्ञान मता है सब ते भीना। पुरुष नाम निजु हिरदे चीन्हा ॥
जग में जोगी जाटा धारी। नाच नचावै दोजक भारी ॥
भगति ज्ञान जो जानै कोई। प्रेम रुचित तब हिरदे होई ॥
अनुभौ अनहद करै बिचारा। सूझि परै तब उतरै पारा ॥
सूझै तीन लोक ते न्यारा। पुरुष पुरान निजु प्रान अधारा ॥
अभय लोक जहँ भय कै नासा। जुग जुग अम्मर करै बिलासा ॥
सुरति बाँधि चेतनि जो ठानै। पहुँचै सो जो मन कै जानै ॥
मूल सब्द तहँ ले पहुँचावै। जो कोइ सतगुरु होइ लखावै ॥
सपने भरम न ता के होई। पहुँचै जाइ सबेरा सोई ॥
अभय लोक जहँ भय नहिं होई। अमृत प्रेम पिये सब कोई ॥
दिब्य दृष्टि ज्ञान लव लावै। जाय छप लोक बहुरि नहिं आवै ॥
भव बूड़त अम्मर होइ जाई। सतगुरु सब्द प्रेम पद पाई ॥
ता को घट्ट सदा उँजियारा। अम्मर पावै सिरजनहारा ॥
अमृत बचन सबन्ह ते बोलै। प्रेम जुगति कबहीं नहिं डोलै ॥
झूठ कहै नर दुरमति सोई। सत्त कहै अमृत रस होई ॥
साखी–सत्त सब्द एह बूझि कै, दुरमति घालै धोइ।
कह दरिया घट निर्मल, मैला कबहि न होइ ॥

(१) गिराया। (२) बराबर।

॥ चौपाई ॥

पावै प्रेम पद जग उँजियारा । सुरती बाँधि करै अनुसारा ॥
निजुपुर पहुँचै बिलम न होई । जो मन चीन्हि के पावै कोई ॥
पाँच पचीस अपने बसि होई । क्रोध मोह तृस्ना सब खोई ॥
ऐसन जोगी जोग पसारा । ता के घट्ट सदा उँजियारा ॥
होखै जोग न मन बसि आवै । जनम जनम ऐसे जहँड़ावै[१] ॥
भगति ज्ञान का करौ बिचारा । सहज मुक्ति भवसिंधु उबारा ॥
मन कै धार चिन्हौ चित लाई । कसी कमान ज्ञान पर आई ॥
तीनि लोक भौ बेद पसारा । ता में चीन्हो ज्ञान बिचारा ॥
ता में सतगुरु सब तें न्यारा । चौथ लोक ता का पैसारा ॥
निहचय अजर अमर होइ जाई । कबहिं न या जग भटका खाई ॥
अमर लोक में अमृत पीवै । मुक्ति महातम जुग जुग जीवै ॥
अंतर जोग भवन में बासा । परम पुरुष जहँ भय कै नासा ॥
जुग जुग रहै पुरुष के पासा । अविगति देखै अजब तमासा ॥
सतगुरु सब्द मानु सत सोई । जनम जनम कै दुरमति खोई ॥

छंद—जिवन मुक्ती जन रहत, भवसिंधु पार उतारहीं ।
जन जानि भजु सतनाम के, सुगंध परिमल पावहीं ॥
दनुज दानव[२] ज्ञान की गति, प्रीति पंथ सोहावहीं ।
हरहिं कलिमल जुगति जीवन, संत सो गुन गावहीं ॥

सोरठा—परमारथ परमानँद, पिय पर सुरति लगाइये ।
ज्यों सरदे को चंद[३], जग जीवन गुन ज्ञान है ॥

॥ चौपाई ॥

जौं लगि प्रेम जुगुति नहिं होई । केतनौं ज्ञान कथै नर लोई ॥
सतगुरु सीतल सब्द समाई । अमी प्रेम रस सहजहि पाई ॥
अलि[४] पंकज[५] ज्यों रहै लोभाई । बिलगि बिहरि फिरि हिलिमिलि जाई ॥
ज्यों चंदहिं चित दीन्ह चकोरा । ऐसी प्रीति करै नहि भोरा[६] ॥

---

(१) ठगावै । (२) दैत्य, राक्षस । (३) कहते हैं कि कार की पूनो के चाँद से अमृत बरसता है । (४) भँवरा । (५) कँवल । (६) भूल से भी ।

भूलि भूलि सब जाहिं नसाई । ज्ञान बिना नहिं दीढ़[1] देखाई ।।
सोई गुरु निहचय चित भावै । जो जन जियतहि मुक्ति बतावै ।।
तन छूटे फिरि परहि अँदेसा । कैसे बूझहि मुक्ति संदेसा ।।
राह छेकि जम करहि अहारा । देह धरे भरमहि संसारा ।।
तन छूटे पुनि कहाँ समाई । कहु कस नाम भजन लव लाई ।।
जियतहि सत पद जो मन लाई । तन छूटे सत सब्द समाई ।।
भगति बिना जम दारुन अहई । बिना ज्ञान कहु कैसे लहई ।।
भरमि भरमि पुनि भवजल आवै । मन नहि थिर तो कवन बचावै ।।
एकै चोर सकल जिव मारै । कह दरिया ले परबस डारै ।।
मूल घटै फिनि सब रस जाई । सतगुरु सुरति लगावहु भाई ।।
राव रंक जाइहिं सब कोई । सब मिलि चलिहैं सर्बस खोई ।।
जइहैं पंडित बेद पढ़न्ता । देह धरे फिर भरमि अनंता ।।
सत पद बिना सकल सब जाई । भगति महातम गुन नहिं गाई ।।
तीन लोक रहु डोरि से बंधा । हृदय न सूझै चछु[2] का अंधा ।।
छुटै डोरि चेतन जब होई । एक नाम निजु पावै सोई ।।
पावै बस्तु अनूपम बानी । पूरन पद उपजे जहँ ज्ञानी ।।
जौं लगि दृष्टि एक नहिं आवै । दरसि काल संसय महँ धावै ।।
जब सतगुरु सत सब्द समाई । दुर्मति काल निकट नहिं आई ।।
कोटिन्ह तीर्थ साधुन कै चरना । भक्ति भाव कलि बिष सब हरना ।।
साधु निकट सब तीर्थ कहावै । भूलि भर्मि के जग भरमावै ।।
भरमि रहा नर नाम बिहूना । पल पल होखै मूल महँ छीना ।।
सीव सक्ति सब जीव जहाना । आतम राम न चिन्हहु अपाना ।।

साखी—आतम दरसी ज्ञान निजु, कबहिं न होखै भीन[3] ।
सतगुरु सरन समाइये, रहै प्रेम लवलीन ।

(१) दृढ़ । (२) चक्षु = आँख । (३) जुदा ।

॥ चौपाई ॥

जोग जुगति तजिभोग सब करई । नाम बिना नर नरकहिं परई ॥
अजहूँ सुमिरहु साहब धनी । एक नाम निजु हिरदे आनी ॥
खग[१] औ मीत पंथ दोउ भारी । मन की संसय देखु बिचारी ॥
आवत जात जो मन कै चिन्हई । सूझै ज्ञान भगति कछु करई ॥
कलई कै काम सबै मिटि जावै । जौ घट में परचै कछु पावै ॥
एक दृढ़ मति कर लीजै अपना । कह दरिया संत सुनु बचना ॥
अच्छर माहिं निअच्छर पावै । ज्ञान भगति तब दृढ़ता लावै ॥
पल पल रहै चरन लव लाई । सत साहब समरत्थ सहाई ॥
भगत-बछल संतन सुखदाई । काटि पाप जन निजुपुर जाई ॥
निर्भय नाम तन होहि सहाई । सुमिरत नाम सुधा सम पाई ॥
तुह नाम गति अलख लखाई । ता ते रहौ चरन चित लाई ॥
तुह नाम गति अगम अपारा । केते अधम तरैं अधिकारा ॥
दीन-दयाल सदा किरपाला । तुह सुमिरे दुख दुन्द मिटाला ॥
महि धरनी-धर दीन-दयाला । भक्ती हेतु सदा प्रतिपाला ॥

छंद—जग जनम सूफल ताहि को, एह भगति पद अनुरागही ।
भव भर्म कर्म बिसार के, सत नाम जो गुन गावही ॥
पढ़ि बेद कितेब बिचारि के, एह बिरला जन कोइ जानही ।
धरि बर्त ध्यान सँभार करि, गुरुज्ञान बिन नहि पावही ॥

सोरठा—मूल सब्द निजु सार, भाव भजन चित लाइये ।
दया दिपक उँजियार, एह छोड़ि और न हिं जानिये ।

॥ चौपाई ॥

एक नाम बिनु काम न होई । सदा जात नर जनम बिगोई ॥
भौ मति हीन ज्ञान न हि चीन्हा । सतगुरु चरन प्रेम बिनु हीना ॥
निर्केवल[२] निर्भय नाम सहाई । मंजन मैल काटै सब जाई ॥
(जौ) साहब ध्यान धरै चित लाई । रूप अनूप जोति छबि छाई ॥

(१) पंछी । (२) खालिस ।

साखी—मन पौना परखि ले, देखहु ज्ञान बिचारि।
राधि साधि एक अंग मिलावै, उतरि जाय भव पारि ॥

॥ चौपाई ॥

ज्ञान गहो सतगुरु चित लाई । का भूलहु तुम एहि दुनियाई ॥
काम क्रोध मद तजहू भाई । काम न आवै यह चतुराई ॥
एक नाम निजु साहब गाई । काटहि फंद पाप सब जाई ॥
सुमिरहु सुख संपति बिसराई । दिना चारि का रंग बड़ाई ॥
जोग जाप जग जीवन प्रानी । कंज पुंज में सुरति समानी ॥
निर्मल है मल कबहिं न आवै । ले छप लोक तुरंत सिधावै ॥
बिहिति बिहिति[1] गुन जो जन गावै । ध्यान प्रतीति प्रेम रस पावै ॥
एक नाम छत्र सिर छाजै । अनहद धुनी ज्ञान तहँ गाजै ॥
जब संसय भव के बिसरावै । तब निजु नाम प्रेम पद पावै ॥
गुरु गमि ज्ञान प्रेम लव लावै । धन संपति एह सब बिसरावै ॥
जानहु सठ एक सतनामा । जनम जात एह व्यर्थ बेकामा ॥
सतगुरु सब्द सत्त परवाना । ताहि संत कर निर्मल ज्ञाना ॥
मया रूप जनि फिरहु भुलाना । अंतहुँ फेरि परिहि पछिताना ॥
जम कै फाँस फंद बड़ भारी । किरिया करम बेद मत डारी ॥
तीनि लोक सब कहै पुकारी । पढ़ गीता यह बेद बिचारी ॥
अंतहु कारन जगत भिखारी । प्रेम रुचित नहिं हृदय बिचारी ॥

साखी—कह दरिया एक नाम है, मिथ्या यह संसार।
प्रेम भगति जब ऊपजै, उतरि जाय भव पार ॥

॥ चौपाई ॥

भाव भगति जो दृढ़ता लावै । हीरा नाम सो परगट पावै ॥
भूले फिरहिं बिना गुरु ज्ञानी । सत्त सब्द नहिं पावहिं बानी ॥
सुनहू संत सबद निजु सारा । दायानिधि भवसिंधु उबारा ॥
भक्तबछल संतन्ह सुखदाई । जन कै दुख मेटै प्रभुताई ॥

---

(१) (गुरु के) समझाये हुए।

भगति हेतु परगट होइ जाई । जब सुमिरै दृढ़ ध्यान लगाई ॥
जग महिमा गति अपरंपारा । तुलै न नाम नर करै बिचारा ॥
जन के दुक्ख आप दुख पावै । संकट होय तो जाय छोड़ावै ॥
कहाँ कहाँ नहि भये सहाई । जिन्ह जिन्ह भगति प्रेम लवलाई ॥
हिरदे होय बिबेक दृढ़ाई[1] । अंतहु होय एक फिरि जाई ॥
एकै नाम अवर नहिं भाई । जनि भूलहु धंधा लपटाई ॥
डार पताल सोर अपमाना । ब्रह्मादिक सो खोजहिं जहाना ॥
आदि अंत मधि कया बिराजै । अविगति नाम छत्र सिर छाजै ॥
एह खोजै तब ओहि के पावै । बिन केवट को नाव चलावै ॥
दरिया कहै सुनो संसारा । निहचै नाहिं तो भुलहु गँवारा ॥
आदि अंत एकै होइ आवै । धरि धरि भेष जगत सब गावै ॥
आदि अंत कै मरम न पाई । देखत जगत भुला दुनियाई ॥
अरुझा मगु मति भर्म भुलाना । बसि माया सँग भया दिवाना ॥
अंत काल जब आय तुलाना । मुख से बचन भुला सब ज्ञाना ॥
धन औ धाम से भया बिराना । जब जम पकरि के घँइचल प्राना ॥

छंद—भगति भाव अनूप दृढ़ता, ज्ञान जो गुन गावहीं ।
सार सब्द प्रतीत करि करि, मूल निगम लखावहीं ॥
प्रेम प्रीति लगाय निहचै, बहुरि न भवजल आवहीं ।
कया खोलु कपाट अजपा, अधर में झरि पावहीं ॥

सोरठा—अलि[2] मंदिल में बास, बारिज[3] बारि के ऊपरै ।
खूलेउ कंज[4] सुबास, दिनमनि[5] प्रेम भौ पत्र में ॥

॥ चौपाई ॥

जब उनमुनी प्रेम परगासा । खूलै कंज पुंज निजु बासा ॥
मधुकर[2] राज बास सुख पावै । लपटि घ्रानि[6] संपुट खुलि आवै ॥
सो पद पंकज दिल में लागा । प्रेम प्रीति मन भौ बैरागा ॥

(१) तीसरी पुस्तक में ऐसे है—"हृदय बिवेक दृढ़ ध्यान लगाई"। (२) भँवरा। (३) पानी। (४) कँवल। (५) सूरज। (६) सुगंध।

अब संसय भव जात ओराई । प्रेम प्रतीति नाम निजु पाई ॥
मन की संसय जो निरुवारा । अभय लोक ता कर पैसारा ॥
पुरुष नाम निहचय तब पावै । सपने कबहिं न या जग आवै ॥
सतगुरु आगे सुख बहुतेरा । सत पद का जो करै निमेरा ॥
हिरदय ध्यान नाम लव लावै । बिमल चरन पद पंकज पावै ॥
भरम छुटै इक नाम सहाई । और जुगति का करहु उपाई ॥
राह करहु जो पहुँचु सबेरा । अगम पंथ जहँ जाहु अनेरा[१] ॥
करहु सँभार केउ छेकि न पावै । ज्ञान डोरि पर चढ़ि कै धावै ॥
खरच लेहु कछु संग सहाई । बिलम न होय पहुँचै तहँ जाई ॥
साखी—जा के पूँजी नाम है, कबहिं न होखै हानि ।
नाम बिहूना मानवा, जम के हाथ बिकानि ॥

॥ चौपाई ॥

सो समरथ की कहौं उपाई । सत्त नाम बैठे गुन गाई ॥
ना सूझै तो देहुँ देखाई । संत सेवा सतगुरु पद पाई ॥
एक कोस जात्रा चलि जाई । गाँठी साँभरि[२] बाँधु बनाई ॥
एह तो अपरंपार है जाना । गाँठी साँभरि लेहु सुजाना ॥
जानत नर मृत लोक सुख पाई । ता ते भूलि रहा दुनियाई ॥
आगे सुखसागर बहुतेरा । जो मन करै ज्ञान निजु फेरा ॥
जो मन की दवरी[३] बुझि आवै । तव घट में परचै कछु पावै ॥
मनहिं में करता धरता अहई । मन एह राह बिगारन चहई ॥
जो मन ज्ञान कैदि करि आवै । तव मन साँच सतगुरु पद पावै ॥
साखी—कह दरिया मन कैद करु, जो चाहो सत नाम ।
करम काटि नर निजपुर, जाय बसै निजु धाम ॥

॥ चौपाई ॥

मनहि चलावै मनहि फिरावै । मनही तीरथ बरत करावै ॥
जो मन ज्ञान कसौटी लावै । तव मन ज्ञान नाम निजु पावै ॥

---

(१) बेजाना हुआ । (२) सीधा । (३) दौड़ ।

मनही नेम अचार करावै। मनही मन के पुजा चढ़ावै ॥
जो मन मूरति आपु लखावै। तव जोगी वह सिद्ध कहावै ॥
साखी—मन के जीते जीतिया, मन हारे भौ हानि।
मन हि बिलोय ज्ञान कर मथनी, तव सुख उपजे जानि ॥

॥ चौपाई ॥

कह दरिया मन डहँकत[1] फिरै। एकै चोर सकल जिव पिरै ॥
सो मन निर्मल निहचय रंगा। उपजै ज्ञान साधु के संगा ॥
एकै नाम प्रेम सुख चैना। करै भगति बोलै सत बैना ॥
सोई करो हंसा सुख पावै। नहिं तो काल फिरि बहु भरमावै ॥
जाइहि जनम ब्रिथा[2] जगमाहीं। सतगुरु चरन सुधा सम नाहीं ॥
सब घट व्यापक एकै रामा। सरग पताल बसै सब धामा ॥
एकै ब्रह्म सकल घट सोई। ताहि चिन्हहु सतसंगति होई ॥
तिनहिं रचल यह सकल जहाना। आदि अंत सत्त परवाना ॥
कीट पतंग सबन्हि में व्यापै। ई सब चिन्हहु ज्ञान निजु आपै ॥
साखी—मरकट[3] नग नहिं चीन्हही, नगन फिरै बन माँझ ॥
नाम बिमुख नर बिकल है, ज्यों[4] जननी होय बाँझ ॥

॥ चौपाई ॥

जोनग लाल नाम नहिं चीन्हा। मरकट मुठि आपन जिव दीन्हा ॥
सो सठ रठकठ[5] मति का हीना। साधु संगगि नहिं चिन्हे बिहीना ॥
सत्त नाम निजु यह जग तारै। सो नाम गति काहे बिसारै ॥
प्रथमहि आये पुरुष अमाना। अनंत जुग ताको अस्थाना ॥
जानहु तेहि सत्त परवाना। महिमंडल धरती असमाना ॥
है सरवज्ञ सबन ते न्यारा। जिवनि मुक्ति है जिद करारा ॥
जा कर आदि अंत बिस्तारा। अवनि[6] पताल महि मंडल तारा ॥
आतम देव अनँत[7] कै पूजा। आतम छोड़ि देव नहिं दूजा ॥

---

(१) धोखा देना। (२) वृथा। (३) बंदर, गँवार। (४) दूसरे पाठ में "वलु" है।
(५) रहठा की लकड़ी जो निकम्मी होती है। (६) पृथ्वी। (७) दूसरा पाठ "अन्न" है।

पढ़ि पढ़ि पंडित बेद बखाना । पत्थल पूजत फिरत भुलाना ॥
सुरति हृदय एह करौ बखाना । तब तुह होय बहु अम्मर ज्ञाना॥
जेहि कारन सठ तीरथ जाई । रतन पदारथ इहईं पाई ॥
पढ़ि पंडित का बेद बखाना । सो घट पट नहिं खोजै ज्ञाना ॥
मन कै मथनी करु निजु ज्ञाना । ढूँढ़ि रहो इक गुप्त समाना ॥
देस धावहु का धंधा भाई । निहचै होय तबहि निजु पाई ॥
निहचै ब्रह्म सत्त करतारा । निहचै उतरहिं भवजल पारा ॥
निहचै ताहि मिलै करतारा । निहचै भगति प्रेम निजु सारा ॥
आतम दरस दिसै जेहि प्रानी । कबहिं न होखै भवजल हानी॥
जेहि पूजे से देवता होई । पूजे तेहि जाने नहिं कोई ॥
बोलता पुजै सब संसय मिटाई । तब हंसा छप लोक समाई ॥
जाय छपलोक बहुरि नहिंअवना । जुग अनंत सुखसागर पवना॥
सुख तहवाँ करिहै बहुतेरा । बहुरि न करिहै या जग फेरा॥
निजु गहि नाम प्रेम लव लावै । दास होय तब जग समझावै॥
तबही ज्ञानी साँच कहावै । जो करता कै भेद बतावै ॥
मन ज्ञान इक्क रंग मिलावै । तब मन ज्ञान नाम इक पावै ॥
सतगुरु सब्द प्रेम निजु सारा । संत साध मिलि करौ बिचारा॥

छंद–गहु गहिर ज्ञान बिचार ते, सत सब्द में धुनि लावही ।
एह जान दे बहु बात बकता, सब्द नहिं दृढ़ आवही ॥
तहँ अगम है दरियाव दिल में, भेद कोइ कोइ पावही ।
तहँ कँवल फूले भँवर भूले, जोति अति जबि छावही ॥

सोरठा–दूजा दुबिधा डारि, एक नाम संसार में ।
भवजल जाहि न हारि, निहचय नाम बिचारिये ॥

॥ चौपाई ॥

जीवन मुक्ति एक बेवहारा । तेहि सुमिरे जिव होय उबारा ॥
प्रेम भक्ति जिन्ह केवल जाना । जोति मँडल महँ ता कर प्राना ॥

सत्त नाम जपहु बेवहारा। बिना नाम पसुवा अवतारा ॥
एक नाम जो हिरदे लावै। जनम जनम के पाप कटावै ॥
सत्त नाम सब ते अधिकारा। पुजहु देव का करहु बिचारा ॥
साखी—हंस नाम अमृत नहिं चाखेव, नहिं पाये पेसार[१]।
कह दरिया जग अरुझेव, इक नाम बिना संसार ॥

॥ चौपाई ॥

सतगुरु ध्यान रहो लवलाई। मिटहि जरा जिव जम नहि खाई ॥
जनम जनम के प्राछित जावै। निर्केवल होय छप लोक समावै ॥
करहु ध्यान सतगुरु कै सेवा। सकल मही[२] का पूजहु देवा ॥
निहततु छोड़ि जो तत्तु बिचारै। सो हंसा छप लोक सिधारै ॥
गूँगा होय अमृत सो पावै। आपु चखै फिरि और चखावै ॥
चखै प्रेम निसि बासर लाई। ऊठत बइठत रहै समाई ॥
जो गिरिही महँ रहिहहिं जाई। बूझि बिचारि सो बचिहहिं भाई ॥
संत सेवा करिहहिं चित लाई। ता के जम्म[३] निकट नहिं जाई ॥
संत सोई संतोष में आवै। सतगुरु चीन्हि के माथा नावै ॥
ताल मृदंग समाज बनावै। भेष डारि सब जग समुझावै ॥
बहु बिधि नाचै जगत रिझावै। सो नर सपने मोहिं न पावै ॥
साखी—बूड़े भेख अलेख स्वाँग धरि, काल बली धरि खाय।
बाचे सो जेहि भर्म नहि, सतगुरु भये सहाय ॥

॥ चौपाई ॥

सब्द सजीवन हैगा मूला। जो कोइ प्रेम गहै अस्थूला ॥
सब्द देखि जम निकट न आवै। मंत्र साँपिनी घूरि चटावै ॥
जो कोइ सब्दहि करै बिचारा। बाद बिबाद तजै संसारा ॥
बाद किये रीझै नहिं साई। जो बूझै सत सब्द दृढ़ाई ॥
ता सौं अर्थ कहौं समुझाई। जो कोइ प्रेम रुचित होइ आई ॥
बिना ज्ञान मूल नहिं देखै। होखै ज्ञान प्रेम रस पेखै ॥

---

(१) धसने न पावै। (२) पृथ्वी। (३) जम।

पुरुष ज्ञान भगति है नारी । ज्ञानहि भगति बीच नहिं डारी ॥
पहिले भगति तब होवै ज्ञाना । पहिले सत तब पुरुष अमाना ॥
सत्त सुकृति निजु पंथ बिरागा । सुमिरहि सत्त प्रेम अनुरागा ॥
मुक्ति पंथ निजु खोजै सोई । पावै प्रेम निजु अर्थ समोई ॥

साखी—सुमिरन माला भेख नहिं, नाहिं मसी को अंक ।
सत्त सुकृति दृढ़ लाय के, तब तोरै गढ़ बंक ॥
ब्राह्मन औ सन्यासी, सब सों कहा बुझाय ।
जो जन सब्दहि मानिहैं, सोई संत ठहराय ॥

॥ चौपाई ॥

अगम ज्ञान कथा बिस्तारा । चोरन के घर परा हँकारा ॥
हाय हाय ओइ सब मिलि करहीं । सब्द साधि हम निहचै धरहीं ॥
तन मन वारि प्रेम पगु दीन्हा । पद पंकज निजु हिरदे चीन्हा ॥
भगति बिराग प्रेम अनुरागा । निरालेप निजु निर्गुन जागा ॥
तिर्गुन ते ओइ रँग है भीना[1] । अजर अमान सत पुरुषहि चीन्हा ॥
सत्त सुकृति परवाना[2] पावै । सो हंसा छप लोक सिधावै ॥
अमी तत्तु पीवै निजु ज्ञानी । आत्म दरस माया बिलगानी ॥

साखी—नेम अचार षट कर्म नहिं, नाहिं पाति को पान ।
चौका चंदन ठहर नहिं, मीठा देव निदान ॥

॥ चौपाई ॥

मीठा है परसाद हमारा । समुझि लेहु कोइ ज्ञान करारा ॥
पहिले मुख में प्रेम लगावै । तब पीछे ले हाथ उठावै ॥
जो दाफा[3] जन होय हमारा । ताहि देहु परसाद बिचारा ॥
घो परवाना सत कै बानी । चरनामृत लेवै मन मानी ॥
जोग जुगति निजु गहवे बानी । जा ते काल करै नहिं हानी ॥
अदब अदाब सलाम जो करई । एक हाथ ले सिर पर धरई ॥
हिन्दु तुरुक हम एकै जाना । जो एह मानै सब्द निसाना ॥

(१) भिन्न, अलग । (२) "का बीरा" तीसरी पुस्तक में है । (३) दफ़ा बर्ग, पंथ ।

साहब का एह सब जिव अहई । बूझि बिचारि ज्ञान निजु कहई ॥
जो दाफा में आवै जानी । ता से भर्म केहु जनि मानी ॥
अन पानी सब एकै होई । हिंदू तुरुक दुजा नहिं कोई ॥
करि मुरीद[१] सत सब्द दृढ़ावै । कालिमा बूझि बिचारि पढ़ावै ॥

साखी—किताब कुरान हम बूझिकै, राखा सबद अमान ।
मुख कलिमा कहिये नहीं, अलिफ देखु नीसान ॥

॥ चौपाई ॥

अलिफ निसान देखै दरवेसा । जो जानै सो कहै सँदेसा ॥
भिस्त बास में रहै समाई । बेलि चमेलि डाक[२] तहँ आई ॥
नूर जहूर दीदम है साफा । दरस दिदार कतल करु काफा[३] ॥

साखी—जैसे तिल में फूल जो, बास जो रहा समाय ।
ऐसे सब्द सजीवनी, सब घट सुरति दिखाय ॥

॥ चौपाई ॥

पेरे तिलहि तेल अलगाना । सबद चीन्हि ऐसे बिलगाना ॥
एह संधी निजु जानै सोई । जा हिरदे बिबेक कछु होई ॥
धरनि अकास बंधन जिन्ह कीन्हा । सत्तनाम निजु परचै दीन्हा ॥
चौथे लोक सबद पहुँचावै । तीनि लोक धोखा परि जावै ॥
फुल पर भँवरा बैठै जाई । निजु यह बास कँवल में पाई ॥
बेद पढ़े जनि भूलै कोई । पंडित पढ़िके चले बिगोई ॥
बेद भेद निजु करै बिचारा । सास्तर गीता ज्ञान निरुवारा ॥

साखी—कह दरिया सुनु संत यह, सबदहि करो बिचार ।
जब हीरा हिरंबर होइहै, तब छुटिहै संसार ॥

॥ चौपाई ॥

निर्भय होय रहो नर लोई । रहै जगाति दुर्ग[४] इक सोई ॥
दुर्ग दानि अहै बटवारा[५] । बिना ज्ञान नहिं उतरै पारा ॥
जोतिहि जानि भुलै संसारा । ये नहिं होइहहि हंस उबारा ॥
सबद बिलोय जो करै बिबेका । तबही हंस परै कछु लेखा ॥

(१) चेला । (२) सुगंध । (३) संसार । (४) कठिन । (५) बटमार ।

जम कै मान इमि मरदै जाई । सब्द गहै जो तत्तु लगाई ॥
निरमल है सतगुरु की बानी । मूल प्रकास उनमुनी जानी ॥
चंद चकोर दृष्टि में लागा । ऐसे उलटि जन लागु सुभागा ॥
आपन मन बोधै जो कोई । आन बोधै तब निर्मल होई ॥
आपु न बोधि बोधै संसारा । सो जन भवजल नाहि उबारा ॥
साखी—दरिया दिल दरियाव है, संतों करी बखान ।
जब सतगुरु पद पाइये, मरदौ जम कै मान ॥

॥ चौपाई ॥

मन परचे बिन पार न पावै । या जग गोबिंद को गुन गावै ॥
सोई बिसंभर सोई रामा । सोई कृस्न गोपिन्ह सँग कामा ॥
सोइ निकलंकी बावन रूपा । बौध रूप सो धरे सरूपा ॥
तीन लोक या की ठकुराई । बेद कितेब जम जाल बनाई ॥
तीनि लोक आसा जिन्ह लाई । फिरि भरमै चौरासिहि जाई ॥
चौथ लोक सतगुरु की बानी । ता को खोजहु पंडित ज्ञानी ॥
भेद निरखि लेहु सो ततु सारा । काया कोट बड़ा बिस्तारा ॥
छंद—ज्ञान गम्मि बिचारु निर्मल, सुरति मूल प्रगासहीं ।
पदुम पत्र तहँ अधर झलकै, जीति अति छबि छावहीं ॥
तहँ हंस बंस बसि मानसरवर, चुँगत सो मन भावहीं ।
कहै दरिया दरस सतगुरु, ज्ञान को गुन गावहीं ॥
सोरठा—भवजल अगम अपार, नाम बिना नहिं बाचहीं ॥
नौका नाम अधार, जो चाहौ भव तरन को ॥

॥ चौपाई ॥

तीन लोक जम जाल पसारा । बिना भेद[१] नहिं उतरै पारा ॥
गुप्त सब्द जो पावै कोई । ताही देखि चला जम रोई ॥
होय जो चेतन तब मन उँजियारा । सबद सिंघासन चला सवारा ॥

(१) दूसरा पाठ "बोध" है ।

साखी—बारह मंडल नौ खँड पृथवी, ता में सबद निनार।
उलटि पवन षट चक्रहि छेदै, देखहु कया बिचार ॥

॥ चौपाई ॥

चारि कँवल जब परसै भाई। भोर[1] किये पुनि सब रस जाई ॥
छव चक्र के भेद है सारा। जो बूझै सतगुरु का प्यारा ॥
सतगुरु बिना होइ नहि पारा। और गुरू पाखंड पसारा ॥
गुरु सोई जो सीख बुझावै। सीख सोई साहब लौ लावै ॥
बहुत गुरू करहीं गुरुवाई। सबद बिना उन्ह भेद न पाई ॥
सबद पाय चलु देइ दमामा[2]। अभय निसान पाय सुख धामा ॥

साखी—अभय निसान बजावहु संतो, परखहु सबद निज सार।
जम के मान मरदि कै, जिदा सत करतार ॥
सूरा सोई सराहिये, जो जूझै दल मन खोल।
कायर कादर बीचले, मिला न सब्द अमोल ॥

॥ चौपाई ॥

बिनु मुख बचन सबद इक बोला। बिनु पगु निरति जगत में डोला ॥
ओइ अनहद जब लागै ताला। सूर चढ़ाय चंद मनि माला ॥
यह झिनझिन जंतर बाजे माला[3]। पीवै प्रेम होय मतवाला ॥
अजपा कै यह भेद बताई। पाँच तत्तु तहँ परगट पाई ॥
तत्तु पाय निहतत्तु में जाई। तत्तु में तत्तु रहा छबि छाई ॥
तत्तु कियारी जोत किसाना। ततुहि गहै सबद निर्बाना ॥
बिना तत्तु नहिं सबद समोई। कह दरिया समझै जन कोई ॥
सत्त नाम परचै नहि पाई। सुर नर मुनि सब चले भुलाई ॥

साखी—सतगुरु साहब साँच हहिं, देखो सबद बिचारि।
गहो डोरि यह सबद की, तन मन डारो वारि ॥

॥ चौपाई ॥

तगुरु आगे तनमन दीजै। प्रेम प्रीति रस कबहि न छीजै ॥
मन ममता सब दुर्मति डारा। परखि लेहु सबद निज सारा ॥

(१) भूल। (२) डंका। (३) यह झनकार का शब्द अन्तर मस्तक में हो।ा है।

॥ चौपाई ॥

सब्द एक मैं कहौं बुझाई । जो तुम पंडित बूझहु आई ॥
मूल बिहंगम डोरी भाई । रबि ससि पवन जो सुन्न समाई ॥
सतगुरु सब्द जबहिं लखि आवै । मूल फूल अमृत मुख[1] पावै ॥
होय निरति तब सुरति देखावै । सार सब्द तब परगट पावै ॥
गगन मँडल बिच सुरति सँवारी । इँगला पिंगला सुखमन नारी ॥
साधहु सब्द जिवन जग मुकुता । पाप पुन्न कबहीं नहिं भुगुता ॥
ऐसी जुगति जो जानै कोई । कहि दरिया निजु जोगी सोई ॥

साखी—दरिया सब्द बिचारिये, झलकै सेत निसान ।
जो सत सब्द न पाइये, तो कहा कथै गुरु ज्ञान ॥

॥ चौपाई ॥

परखहु सत्त सब्द यह बानी । करै बिबेक सो निर्मल ज्ञानी ॥
बिनु परखे नहिं मूल भेंटाई । पारखि जन सो सब्द समाई ॥
सब्दहि तत्तु बिचारहु भाई । पानी पय ज्यों हंस बिलगाई ॥
संस्रित[2] जल पय भीतर रहई । बिबरन[3] बरन सो इमि कर लहई ॥
हंस दसा सदा सुख पावै । काग कुबुद्धि निकट नहि आवै ॥
पारस परसे मोती होई । मान सरोवर अवर न कोई ॥
अवरि सीप बहुते जग अहई । बिनु पारस मोती नहिं लहई ॥
सतगुरु मिलि तो ब्रह्म पुनीता[4] । सास्तर ज्ञान पढ़ा निजु गीता ॥
भव संसय में कबहिं न भटकै । ज्यों जल कँवल कबहिं नहिं अटकै ॥
हठ निग्रह करि भूले जोगी । आसन बाँधि पवन रस भोगी ॥
तन साधत फिरि भये असाधी । पाँच पचीस बहु कैसे बाँधी ॥
छुछम ज्ञान निजु करो बिचारा । मूल बिहंगम निर्मल सारा ॥
जैसे पपिहा बुन्द असमाना । भेद निरखि के उलटि समाना ॥
सत्त सब्द कै करहु बखाना । ज्यों तरकस कसि कसै[5] कमाना ॥
सब्द बिलोय खेलहु चौगाना । सोई संत है निर्मल ज्ञाना ॥

---

(१) दूसरे पाठ में "सुख" है। (२) मिला हुआ। (३) रंग या जाति से रहित। (४) पवित्र। (५) दूसरे पाठ में "लीजै" है।

साखी–सतगुरु सब्द एह साँच है, खोजो निर्मल ज्ञान।
ज्यों हीरा घन[१] सहै लोहन की, अम्मर होय निदान॥

॥ चौपाई ॥

यह घन बुंद बात बहुतेरा[२]। साधु असाधु कुमति जो फेरा॥
सुमति सोई जहँ संत बिराजा। कुमति पाँच तहँ मन भौ राजा॥
जौं मन देखै तत्त बिचारी। पाँच बोधि तन सदा सुखारी॥
बोधे पचीस साध कै डोरी। हुकुम सदा राखै कर जोरी॥
ज्ञान की डोरि प्रेम रस पीजै। गुरु गमि ज्ञान बूझि कर लीजै॥
होय प्रेम तो सुरति समाना। निअच्छर सुरति साँच है ज्ञाना॥
द्वादस चलै पवन परवाना। आवत जात सो चीन्हु ठिकाना॥
मन पवना कै एकै संगा। ज्ञान बिचारि बुझै यह रंगा॥
एकै मन डँहकै संसारा। छन महँ नीकट होत निनारा॥
मन कै रँग बूझै जन कोई। निर्मल होय निरंतर सोई॥
यह मन जाल जँजाल जहाना। सो मन चीन्हि होखै निजु ज्ञाना॥

साखी–एह मन काजी एह मन पाजी, एह मन करता एह दरबेस॥
एह मन पाँड़े एह मन पंडित, एह मन दुखिया करत नरेस॥

॥ चौपाई ॥

प्रेम गुरू एह पुरुष कि बानी। दूरि तजो एह जग की स्यानी॥
मन चीन्है तो होय निरदंदा। छूटि जाय तब जमपुर फंदा॥
जो गति चाहत हो तुम दासा। दूरि तजो यह जम कै फाँसा॥
हंस सरवर ते जल नहिं जाई। मान सरोवर मोती खाई॥
होय हीरा तब निर्मल काया। जाय छपलोक बहुरि नहिं आया॥
छप लोक की अकथ कहानी। पावै अमृत निर्मल बानी॥
मन कै धोखा मिटि सब जाई। छप लोक में अमृत खाई॥
कलप कोटि कै मेटु अँदेसा। छूटि जाय तब जमपुर देसा॥

---

(१) हथौड़ा। (२) इस घन (बादल) की बूँद में बहुत बात (हवा) है जिसको आगे कुमति कहा है।

साखी—छूटहि जमपुर देस यह, प्रेम परसु निजु ज्ञान।
कामिनि कला फंद जग त्यागि, गहु निर्मल सब्द अमान ॥

॥ चौपाई ॥

ए मति भुलहु गीता की बानी। समुझि भेद लीजै कछु ज्ञानी ॥
लावहु प्रेम प्रीति निजु जाई। सतगुरु ज्ञान अमृत फल पाई ॥
छिमा छीर तब दही जमाई। जो नर जुगति प्रेम रस लाई ॥
सील सँतोष खंभ करु भाई। सुरति निरति का नेता[१] लाई ॥
तन करु मेटुकी प्रेम करु पानी। निकलै घिरित सुबास बखानी॥
ऐसे जुगति प्रेम रस पीजै। तब माखन महि घृत कछु लीजै ॥
बाहर भीतर अंदर ओई। तव अधरता जोगी सोई ॥
बिन जल नदी रही बढ़ि आई। बिना नाव कर केवट खेवाई॥
बिन अनहद धुनि बहुत सोहाई। अभिमंडल जहँ पुरुष बनाई ॥
कोटिन्हकरि[२] तहँ मनि उँजियारा। कोटिन्ह कंज पुंज जलकारा ॥
कोटिन्ह कामिनि मंगल गावैं। हीरा मानिक सेज बिछावैं ॥

साखी—अति सुख पावहि हंसा, करहिं कोताहल[३] जाय।
छप लोक अमृत पिये, जुग जुग छुधा बुताय ॥

॥ चौपाई ॥

छप लोक सब ऊपर होई। पावै अमृत जुग जुग सोई ॥
जौं गुरु ज्ञान मिलै निजु सारा। ज्ञान गम्मि का करै बिचारा ॥
तीनि लोक है मन कर ठाटा। मनहिं बिसंभर रोकै बाटा ॥
ऐसन जीवन जीवै जोगी। सब्द नाम तन रहै बियोगी ॥
मुवै न जिवै आवै नहिं जाई। सब घट आपै चुनि चुनि खाई॥
देखै कोइ नहि सभै चोरावै। मुनि ज्ञानी कोइ भेद न पावै ॥
बड़े जोगी यह जोग बिधाना। उनहुँ के घैंच मारि जम बाना॥
कोइ नहिं बाचे जम के फाँसा। जो न होय सतगुरु के दासा॥

---

(१) मथनी की डोरी। (२) कला। (३) आनंद।

सतगुरु के गति पावै कोई। जाय छप लोक सिधारै सोई ॥
गहै प्रेम होय निर्मल सरीरा। मेटि जाय सब जम कै पीरा ॥
साखी—सुमिरहु सत्त नाम गति, प्रेम प्रीति चित लाय।
बिना नाम नहिं बाचिहो, मिर्था जनम गँवाय ॥

॥ चौपाई ॥

सुमिरहु साँझ सकेर सबेरा। ज्ञान गुरू गति करहु निमेरा ॥
भवजल जल है अगम अपारा। कवन केवट गहिहै करुवारा[१] ॥
जौं अबहीं करि लेहु निमेरा। ज्ञान गुरू गति गहो सबेरा ॥
जौं लेवहु सतगुरु कै बानी। लाँघि सकौ तव भवजल पानी ॥
बिना सब्द नहिं होय उबारा। बिनु सतगुरु उतरै नहिं पारा ॥
काया परचै मूल जब पावै। सतगुरु मिलै तो सब्द लखावै ॥
कवन सब्द छप लोक लै जाई। कवन सब्द से परचै पाई ॥
कवन तत्तु लै सुर्रति समाई। कैसे प्रेम चुवै मुख लाई ॥
कवन पवन गरजै ब्रह्मंडा। कवनै कालराय कँह डंडा ॥
साखी—सार पवन औ चौदह मंतर, लीजै ज्ञान बिचारि।
छय चक्र अठदल कँवल, कर्म काल सब जारि ॥

॥ चौपाई ॥

पवन एक सार निजु बानी। सोई भेद परखो निजु ज्ञानी ॥
निरति सुरति में आवै जाई। जा तें जोतिहि जोति समाई ॥
दुइ कर पवन सूर औ चंदा। चढ़ै गगन सब कर्म निकंदा[२] ॥
अभय नाम निजु जानै कोई। पीवै प्रेम सुधा रस सोई ॥
इँगला पिंगला सुखमनि फेरै। लाय कपाट गगन गहि घेरै ॥
छय चक्र निजु करै निमेरा। सो जोगी घर पहुँचु सबेरा ॥
सत्त सब्द जौं करै बखाना। सेत धजा निसि दिन फहराना ॥
आवै अनुभौ देखु बिचारी। आठ कँवल घर भीतर बारी ॥
नवो नाटिका करहु निमेरा। पिवै प्रेम अस्थिर घर डेरा ॥

---

(१) लग्गी। (२) निर्मूल हो जायँ।

दसवें द्वार रंध[1] करु बंदा । जहाँ काम निति करै अनंदा ॥
ग्यरहें ज्ञान छत्र सिर धरई । पुरुष होय जग में अवतरई ॥
बरहें बाहर भीतर धावै । पाँच तत्त का परचै पावै ॥
तेरहें तीन गुनन तें न्यारा । सत्त पुरुष निजु ज्ञान बिचारा ॥
चौदहें आवागवन न होई । निकट सिंघासन पहुँचै सोई ॥
महि मंडल सब रहा बनाई । दीप दीप सुगंध सोहाई ॥
चाँद सुरज तहँ मनि उँजियारा । नाहीं उगहिं गगन का तारा ॥
अछै बृच्छ सुख सुन्दर सोई । अजर अमर बैठे सब कोई ॥
तीनि लोक नष्ट जब होई । ऐसा बेद कहै सब कोई ॥
तब यह जीव कहाँ रहि जाई । सो जग्गह मोहिं देहु देखाई ॥
साँचो पंडित मानो भाई । पढ़ि पढ़ि गीता अर्थ बुझाई ॥
सब छोड़ो जग की चतुराई । अंत काल फिरि जम धरि खाई ॥

साखी—पंडित पढ़ि जिनि भूलहू, खोजहु मुक्ति का भेव ।
सास्तर गीता ज्ञान बिचारहु, करहु जमन[2] कै सेव ॥

॥ चौपाई ॥

नाहीं दिल सागर तुह देखा । नाहीं करि लेहु बचन बिसेखा ॥
नाहीं प्रीति पिया से लाई । नाहीं ज्ञान न गुरु गमि पाई ॥
नाहीं सिव सक्ती को ज्ञाना । नाहीं आतम चिन्हहु अपाना ॥
नाहीं पाँच तत्तु तुम साधा । नाहीं नवो नाटिका[3] राधा ॥
नाहिं पचीस पवन तुम चीन्हा । प्रकृती गति बिवरन नहिं कीन्हा ॥

साखी—एक एको नहिं जानहु पंडित, कैसे होय निस्तार ।
मन ममता मद त्यागहू, मिलहि सबद निजु सार ॥

॥ चौपाई ॥

मूल गँवाय तुहु जाहु गँवारा । पकड़ि पेड़ तब पकड़हु डारा ॥
झूलहि आदि अंत लै सोई । मरन काल तब चलै बिगोई ॥

---

(१) छेद । (२) जम जो गिनती में चौदह हैं । (३) नो प्रकार का जोग अथवा चेटक नाटक की साधना नहीं की ।

काम क्रोध लोभ बड़ भारी । पंडित बेद कीन्ह बिस्तारी ॥
क्रोधे नष्ट भये मुनि ज्ञानी । क्रोधे कीन्ह मूल में हानी ॥
क्रोधे रावन छिन में गयऊ । लंक भभीखन पल महँ भयऊ ॥
क्रोधे जादो गये नसाई । छपन कोटि जल बरिसिन्हि आई ॥
क्रोधे गन गंधर्प सब गयऊ । पंडित पढ़ि के क्रोध समयऊ ॥
लोक बेद लें जमपुर बासी । भगति भाव ब्राह्मन सब नासी ॥
मुक्ति द्वार इमि जम ने मारा । नव ग्रह लाय ठगौरी डारा ॥
पढ़ि पाखंड पथल का पूजा । आतम देव अवर नहिं दूजा ॥
साखी—तब तोहिं जानौं पंडिता, मुक्ती कहि देहु आय ।
छप लोक की बात कहु, तब मोर मन पतियाय ॥

॥ चौपाई ॥

पोथी पत्रा गीता गावहु । भेद नाहिं तो बेद भुलावहु[१] ॥
आन के पाप अपन सिर लीजे । अपनी मुक्ति कहा तुम कीजे ॥
कोटिन ब्रह्मा खोजत भुलाना । छप लोक नहिं सुरति समाना ॥
सुरति चिन्हे बिनु भये दिवाना । मन परचै बिनु आपु भुलाना ॥
तुलसी तारक मंत्र दृढ़ावै । राम तारक से जग भरमावै ॥
माया पछ परसे सब कोई । निर्भय एह खोजो नहिं सोई ॥
एह माया बलि छरो[२] बनाई । माया सो जग चुनि चुनि खाई ॥
माया ते सकल बस कीन्हा । माया कै सीता नहिं चीन्हा ॥
सो माया रावन घर गयऊ । बुधि बल ज्ञान सबै बसि भयऊ ॥
छिन मेंरावन भयउ बिधंसा । कुल नहिं राखिन्ह एको बंसा ॥
साखी—मन की ममता काल है, करम करावै जानि ।
गरब मिलायो गरद में, रावन की भइ हानि ॥

॥ चौपाई ॥

जिन्हि ब्रह्मा कहँ बेद सुनाई[३] । ताको अंत ब्रह्मै नहिं पाई ॥
कोटिन्ह ब्रह्मा गये भुलाई । कोटिन्ह इंद्र मेघ चलि जाई ॥

---

(१) दूसरे पाठ में "भुलावहु" की जगह "सुनावहु" है । (२) राजा बलि को छल लिया । (३) निरञ्जन ने ब्रह्मा को बेद सुनाया था ।

केते कृस्न जगत भरमाई। गोप सखा सँग गाय चराई ॥
मुख मुरली लिये आपु बजाई। वृन्दावन बसि तान सुनाई ॥
केते कंस बधन उन्ह कीन्हा। कइउ बार कुबरिहि मन दीन्हा ॥
केते संकर जोग सब करहीं। उपजि बिनसि देह सब धरहीं ॥
साखी–कह दरया सुनु पंडिता, यह करता को भेव।
पत्थल फूल का पूजहू, सुमिरन करु सुख सेव ॥

॥ चौपाई ॥

पंडित ने[1] कुपंथ बिचारा। सत्तनाम है प्रेम अधारा ॥
सत सारथि करि लीजै अपना। जनम जनम कै मिटै कलपना॥
ताहि खोजु जो खोजहिं कबीरा। बइठि निरंतर सबद गँभीरा[2]॥
जनम जनम कै धोख मिटाई। जाय छप लोक बहुरि नहिं आई॥
केते ब्रह्मा जाहिं नसाई। इंद्र कतेको बिनसहिं आई ॥
जइहहिं सेस सहस मुख बचना। तीनि लोक का ईहै रचना ॥
चलिहैं संकर जोग बिसारी। चलिहैं कृस्न इमि बाल मुरारी ॥
जइहैं जोगि जती सब कोई। तीनि लोक काल बसि होई ॥
साखी–कह दरिया सुनु पंडिता, देखो सबद बिचारि।
जाइहि अभय लोक नर, साहब सुरति सँवारि ॥

॥ चौपाई ॥

ढूँढ़त सुर नर मुनि सब हारे। आदि अंत नहिं कहैं बिचारे॥
धरि धरि रहैं जोति कै आसा। सो नर जइहैं जम कै त्रासा ॥
पुरुष पुरान जिन्हि हंस उबारा। ता को खोज न करहिं गँवारा॥
भटका मिटै न मूल भेंटाई। ऊँच नीच कहि गये भुलाई ॥
गुरु गमि ज्ञान गम्म नहिं कीन्हा। नाहीं गुरु सतगुरु कहँ चीन्हा ॥
सोई कहो जो कहहिं कबीरा। दरियादास पद पायो हीरा ॥

---

(१) तीसरी पुस्तक में "ने" की जगह "नाम" है। (२) तीसरी पुस्तक में "सबद गँभीरा" की जगह "लीजै बीरा" है।

साहब परचै दीन्ह देखाई । तातें लोक कहा समुझाई ॥
झूठ बात जनि जानै कोई । सब्द बिचार करहि नर लोई ॥
जम्म जगाती बड़ उतपाता । करै अचानक जिव कहँ घाता ॥
मातु पिता कोइ संग न लागा । मुअला पुरुष नारि जिय त्यागा ॥
नहि माया[१] रोवहीं बेचारी । जेवहिं[२] कुरमा[३] भरि भरि थारी ॥
मुअला कुरमा नर्के देहीं । मद्य मुख लाइ मास मुख देहीं ॥
छोटि जाति कै करम बिधाना । अवार जाय के नर्क समाना ॥
बड़ बड़ जीव मच्छ सब खाहीं । मुअला पित्र नर्क के जाहीं ॥
मारहिं हरिनी खसी बगेरा । मारि मारि सब खेलहि अहेरा ॥
मासु एक दूजा नहिं होई । समुझि के जल अरपै नहि कोई ॥
आधा पाप ब्राह्मन कहँ राता । राह दिखाय करै जिव घाता ॥
हिन्दू तुरुक इमि दुनों भुलाना । दुनों बादि ही बादि बिलाना ॥
वो हरिनी वो गाइहिं खाई । लोहू एक दुजा नहिं भाई ॥

॥ साखी ॥

ब्राह्मन सो बिरखब[४] को साजा । कल्प कोटि लै होत अकाजा ॥
मुलना दोजक जार में आवे । जबरील[५] जबर तेहि बहुत सतावे ॥

छंद–भरमि भरमि भवसागरं, गुन ज्ञान गम्मि न पावहीं ।
पढ़ि बेद कितेब पुरान को गति, दरस दया नहि आवहीं ॥
भवन भारी बिना दीपक, नाम मनि बिसरावहीं ।
कहै दरिया दगा दिल में, ललचि मन पछतावहीं[६] ॥

सोरठा–अँधियारे दीपक दीजिये, अब होखै परकास ।
ज्ञान समुझि कर लीजिये, उतरि जाय भवपार[७] ॥

॥ चौपाई ॥

मनुष जनम इमि सुफल अनंदा । जो जन परै न जम के फंदा ॥
कहत सुनत सब जाय नसाई । मन परचै बिनु मूल गँवाई ॥

(१) माता । (२) खायँ । (३) कुनबा, नातेदार । (४) साँड़ । (५) जान निकालने वाला फ़िरिश्ता । (६) तीसरी पुस्तक में "लपटावहीं" है । (७) दूसरे पाठ में ऐसे है "मेटै जम की त्रास" ।

नाम बिना कस जिवन कहावै। जो नहिं गुरु गमि ज्ञान लखावै ॥
संत सोई सीतल सत बानी। अमृत प्रेम पियै ओइ ज्ञानी ॥
मस्तक मुकता जा के होई। मस्त गयंद[१] कहावै सोई ॥
ता के पारस सिर मुख लागा। भय नहिं निकट रहै ओहि जागा ॥
बिन मुक्ता मस्तक है हीना। सो नर ऐसा सतगुरु बीना[२] ॥
भुवँग सोई जा के मनि उँजियारा। जा के तेज दिपक पैठारा ॥
रहै सनीप ओहि सनमुख सोई। और फिरै सब केचुवा होई ॥
संत सोई मनि मस्तक मूला। ज्ञान रतन कबहीं नहिं भूला ॥
साखी—दरिया भगत कहावै सोई, जा के मनि उँजियार।
अवरि भरमि भठ भठ मुए, निर्भय नाहि गँवार ॥

॥ चौपाई ॥

पत्थल[३] नाम कहावै सोई। जेहि परसे से कंचन होई ॥
अवरि परै सब सील पखाना। ता को कबि जन करौं बखाना ॥
सतगुरु सबद बचन जेहि लागा। सो जन संत है सुमति सुभागा ॥
नारि सोई जो नरमै[४] बोलै। पिय के सेवा बचन नहिं डोलै ॥
और कतेको बचन गँवावै। पिय के सेवा कमी नहिं लावै ॥
सकल जिवन्ह कहँ कहै बुझाई। पंडित के घर सोच न आई ॥
अपने ब्राह्मन बिस्नो होई। घर में साकठ मेहरि[५] सोई ॥
माँस खाय सँग सूतै जाई। ता को मुख चूमै गहि लाई ॥
कहत फिरै हम बड़ा कुलीना। घर में तुरुकिनि[६] नाहीं चीन्हा ॥
झूठ कहै सब झूठ सुनावै। नौ गुन काँध जनेऊ नावै ॥
साखी—साँचो पंडित मान ओई, सत्ते सील असील।
सत्त बसै नहिं स्वारथ ताके, सोई बड़ा बखील[७] ॥

॥ चौपाई ॥

सत धरती है सत्त अकासा। यह सत भगति प्रेम परगासा ॥
ता को सत नर करो बखाना। पथल छोड़ि समुझै जो ज्ञाना ॥

---

(१) हाथी। (२) बिना। (३) पारस। (४) कोमल। (५) निगुरी स्त्री। (६) मुसलमानी। (७) कंजूस।

ना कछु बोले ना कछु खाई । कहु तेहि पूजे का मिले भाई ॥
जौं कोइ पंडित होखै ज्ञानी । भेद समुझि लेहु निर्मल बानी ॥
मेरे कहे जो मानै प्रानी । सत्त सब्द नाहिं होखै हानी ॥
अभय लोक जहँ भय नहिं जानी । होय हीरा तब निर्मल ज्ञानी ॥
सबदै तारै सबद उबारै । सबदै चढ़ि छप लोक सिधारै ॥
सबदै घोड़ा हंस असवारा । सबदै चाबुक ज्ञान करारा ॥
सबदै पैठे माँझ मँझारा । सबदै पीये प्रेम अधारा ॥
कह दरिया जिन्ह सब्द निमेरा । ता को हंस इमि पहुँचु सबेरा ॥

साखी—सबद सरासन बान है, सत्तै सब्द निसान ।
कह दरिया नर बाचिया, सतगुरु की पहिचान ॥

॥ चौपाई ॥

एह हीरा सोइ जग में लहई । छोटी बड़ी बात सब सहई ॥
जैसो राजा रंक कहावै । एक रंग दूजा नहिं भावै ॥
दूजा दुबिधा जेहि नहिं होई । भगत नाम कहावै सोई ॥
ब्राह्मन सो जो ब्रह्महिं चीन्हा । ध्यान लगाय रहै लवलीना ॥
क्रोध मोह तृस्ना नहिं होई । पंडित नाम सदा है सोई ॥
संध्या गायत्री जप जिन्ह जाना । भेद निरखि जिन्ह निर्गुन ज्ञाना ॥
सगुन नाम बिरला जन पावै । निर्गुन नाम सो सहज लखावै ॥
पूरन पँडित कहावै सोई । ब्रह्म चिन्हे बिनु जात बिगोई ॥
अठारह गुन ब्राह्मन के होई । ग्यारह बरन कै राजा सोई ॥
नव गुन सूत सँजोरि सुधारे । गाँठि तीनि मोह कम करि डारे ॥
काम क्रोध मोह बड़ भारी । बोलहु पंडित बचन बिचारी ॥
पंडित सबद करहु निरुवारा । का तुह जपहु कवन पद सारा ॥
केहि पर हंस होइहि असवारा । कैसे उतरहि भव जल पारा ॥
सतगुरु जाति पाँति नहिं लीजे । जाति खोजे तेहि पातक दीजे ॥
कहौं सबद सुनो सतबानी । सतगुरु बिना करे जम हानी ॥

साखी–दरिया भवजल अगम है, सतगुरु करहु जहाज ।
तेहि पर हंस चढ़ाय के, जाय करहु सुख राज ॥

॥ चौपाई ॥

पुरुष नाम जो कहों बुझाई । परगट अहै कि गुप्त समाई ॥
निहचय कहों लोक निरुवारा । केहि बिधि मंडल केर दुवारा ॥
केहि बिधि जोति अहै छबि छाई । (कहु) कैसे हंसा सुरति समाई ॥
केहि बिधि नारि रहै रखवारी । कवन रूप ओइ रहै सँवारी ॥
कैसे हंसहिं परछि उतारी । कैसे होखै मंगल चारी ॥
कैसे हंसा अमृत पावै । कैसे पुरुष के जाय समावै ॥
सर्बग[1] सदा प्रगट है भाई । लखि न जाय मन मैलि समाई ॥
हम में तुम में देखु बिचारी । जौं दरपन में प्रतिमा डारी ॥
प्रगट भया तहँ परिमल[2] रंगा । काल कुबुधि मन अपनहिं भंगा ॥
उत्तर मंडल केर दुवारा । तेहि दिसि हंसा सुरति सुधारा ॥
जगमग जोति रहै छबि छाई । बाहर भीतर एक लखाई ॥
सुरति खोजे तब निरति समाई । पूरन ब्रह्म ज्ञान होइ जाई ॥
पाएर[3] दीप नारि ओइ रहही । मंगलचार अमृत मुख लहही ॥
छिरिकि सुगंध हंस मुख डारी । बोलहिं मंगल बहुत सुदारी ॥

साखी–सुधा अग्र परिमल झरे, छिरिकहिं बहुत सुढारि ।
दया दरस दीदार में, मिटा कलपना झारि ॥

॥ चौपाई ॥

पुरुष एक सबन्ह तें ज्ञानी । संतन्ह महिमा सदा बखानी ॥
तेहि सुमिरे हंसा सुख पावै । कबहिं न या जग भटका खावै ॥
सबद बिचार करै नर जोई । अमर लोक कहँ पहुँचै सोई ॥
सबद बिबेकी भगत कहावै । बिना सबद जग में भरमावै[4] ॥

साखी–सबद सरासन बान है, गहो चरन चित लाय ।
गुरु कै सबद बिचारिये, दुर्मति सकल मिटाय ॥

(१) सब जानने वाला— तीसरी पुस्तक में "सरबंगी" है । (२) निर्मल । (३) मानसरोवर के ऊपर एक दीप का नाम । (४) दूसरा पाठ एसे है—"अमर लोक कहँ सो जन जावै" ।

॥ चौपाई ॥

सतगुरु सबद प्रेम रस पीजे । काल कुबुद्धि दूर सब कीजे ॥
सबदै निर्गुन नाह[1] हमारा । ता के खोजहु ज्ञान करारा ॥
बेद लोक सब कहैं बनाई । सपने निर्गुन नाह न पाई ॥
तत्तपुरुष ओइ बिमल बिरोगा[2] । प्रेम प्रीति छीजै नहिं जोगा ॥
मनसा मालिनि आपु दिखावै । कामदेव तहँ मंगल गावै ॥
आतमदेव कि दरसै बानी । सिंचहिं प्रेम सुख बहुत बखानी ॥
सतगुरु आगे सुख बहुतेरा । सत पद का जो करै निमेरा ॥
बूझहु पंडित सत कै बानी । निरखि निरंतर निर्गुन ठानी ॥
पंडित सर्गुन होय जनेऊ । जौ करता कै जानै भेऊ ॥
जौ निर्गुन सूझै बिस्तारा । पंडित तजहि बेद कै भारा ॥
साखी—सासतर गीता भागवत, पढ़ि पावै नहिं मूल ।
निहचै लागै प्रेम जब, तब पावै अस्थूल ॥

॥ चौपाई ॥

निहचय नाम प्रेम लव लावै । सो हंसा छप लोक सिधावै ॥
जाइहि लोक बहुरि नहिं अवना । जनम जनम कै मेटि कलपना ॥
ऐसे बूझहु पंडित भाई । संग लेहु सतनाम सहाई ॥
काया अंतर ब्रह्म निजु बासा । चीन्हहु ताहि प्रेम परगासा ॥
कहौं बानी निजु सुनहु सुजाना । बिना भेद हंस नहिं जाना ॥
सुनहू पंडित हंस कै आदी । झूठ बात कहै सोइ बादी ॥
ब्रह्म फूटि अंस भौ तीना । सत्तपुरुष इन्ह सब तें भीना[3] ॥
प्रतीबिम्बु[4] घट परगट अहई । पुरुष तेज जग इमि कर लहई ॥
देखहु ज्ञान एह कथा बिलोई[5] । अपने आपु में जाइ समोई ॥
सुरती कँवल कहो निजु बानी । सुखमनि घाट करो पहिचानी ॥
घेरि गगन घन बरिसै पानी । दरिया दिल बिच सुरति समानी ॥
निहचय सुरति ज्ञान रस सानी । पियै प्रेम तहँ निर्मल बानी ॥

(१) पति । (२) निर्दोष । (३) भिन्न । (४) छाया । (५) मथन करके ।

साखी—ज्ञान भगति का भेव एह, दिल सागर मन लाय।
पंडित बारहबानी[1] होखै, काल कबहि नहिं खाय॥

॥ चौपाई ॥

धन ओइ पंडित धन ओइ ज्ञानी। संत धन्न जिन्ह पद पहिचानी॥
धन ओइ जोगी जुगुता मुकुता। पाप पुन्न कबहीं नहिं भुगुता॥
धन ओइ सीख[2] जो करै बिचारा। धन सतगुरु जो खेवनहारा॥
धन ओइ नारि पिया सँग राती। सोइ सोहागिनि कुल नहिं जाती॥
अखंडित ब्रह्म पंडित सो ज्ञानी। मन कै रँग बूझहु निजु बानी॥
जो करता के भेद बतावै। सीख होय तब जग समुझावै॥
ब्राह्मन बेद पढ़े का पावै। जीव मारि माँसु मुख लावै॥
ताकरि बात मानै संसारा। कैसे लेइ उतारै पारा॥
माँसु मर्झरि ब्राह्मन जो खाई। अंत काल फिरि जम घर जाई॥
सो नहि बाचै कवनि उपाई। परै नरक चौरासिहि जाई॥

साखी—सत्तनाम अमृत बिना, कैसे होय उबार।
कह दरिया जग अरुझै, नाम बिना संसार॥

॥ चौपाई ॥

निरखि नाम निजु पंडित कहावै। तब अपने गुन जग समुझावै॥
पंडित बारहबानी होई। कबहिं न जमपुर जात बिगोई॥
सपने कबहिं न या जग आवै। सतगुरु ज्ञान नाम निजु पावै॥
छप लोक की बातें कहेंऊ। केवल हंस हिरंबर[3] रहेऊ॥
कहेंउ भेद हंस निजु जाना। जातें हंस सब करहिं पयाना॥
कहौं सत्त पद इमि मन अतना। दूरि जाय करहु जनि रटना॥
अठसठ तीरथ अहै सरीरा। ता में बसै अनूपम हीरा॥
जब हीरा हिरंबर पावै। तब हंसा छप लोक समावै॥
सतगुरु ज्ञान सुनो सत बानी। तजहू पंडित जग के स्यानी[4]॥
करहु प्रेम संतन्ह से जाई। दरसन प्रेम प्रिया नहिं भाई॥

---

(१) खरा सोना। (२) चेला। (३) निर्मल। (४) चतुराई।

साखी—साखी सकल संसार में, संतो करहु बिचार।
नौका नाम ज्ञान है केवट, खेइ उतारौं पार॥

॥ चौपाई ॥

बानि एक घट घट में समानी। एहि बानी के मरम न जानी॥
जंगम जोगी है बहुतेरा। जो न करै घट भीतर डेरा॥
ज्ञान गम्मि नहि करै बिचारा। निर्गुन सर्गुन नहि निरुवारा॥
जौं जग जीवहि बरस पचासा। जौं नहिं मन सतगुरु के पासा॥
कलप कोटि भव चक्र में परई। कष्ट कलपना बड़ दुख सहई॥
नहि पावइ छप लोक कै वासा। फिरिफिरि करही जम कै त्रासा॥
जग कामिनि सों रहो निनारा। मनसामालिनि[१] करो बिचारा॥
जब होखै सतगुरु कै दासा। तब सब छूटहि जम कै त्रासा॥
सो जोगी जग साँच कहावै। जो करता कै भेद बतावै॥
जौ मन थिर होइ भगति दृढ़ावै। सार सबद का परचै पावै॥
अगुमन[२] काम करै नर जाई। पेड़ पकड़ि तब डार दिखाई॥
अग्रे नख[३] हंसा पैठावै। आवै निरति तब सुरति समावै॥
अठदल बिगसित बिमल बिरोगा। छय चक्र मनि मुकुता जोगा॥
निअच्छर निरखि प्रेम पद पावै। छूटै तिमिर गगन झरि लावै॥
प्रेम पंथ में पैठै सोई। ता से संसय जात बिगोई॥
सीस उतारि दछिना जो देवै। को हमको तुम का कहि लेवै॥
आखर भेद कहै समुझाई। अच्छर माँह निअच्छर पाई॥
कह दरिया सो संत सुजाना। एह भेद बिरला केहु जाना॥

साखी—गगन गुफा महँ पैठि कै, देखो सब्द अमान।
छूटि जाय जग संसय, जम कै मरदौ मान॥

॥ चौपाई ॥

सब्दै धरती सबद अकासा। सब्दै भगति प्रेम परगासा॥
सब्दै रचल सकल संसारा। सब्दै बन्धन लोक बिस्तारा॥

---

(१) दूसरे पाठ में "कामिनि" है। (२) आगे से चेत कर। (३) द्वार।

चौथा लोक सब्द की बानी। सब्द समुंदर बाँधल ज्ञानी ॥
सबद बिना नहि होखै पारा। सब्दै पंडित करो बिचारा ॥
ओंकार बेद जगत फैलाई। मूल भेद बिरला केहु पाई ॥
मूल भेद सब्द निजु सारा। करनी कथा ज्ञान विस्तारा ॥
साखी—मूल सब्द निजु सार है, कथनी कथा अपार।
सिव सक्ती मन राधि कै, उतरि जाय भव पार ॥

॥ चौपाई ॥

सुन्न सुन्न सब करै पुकारा। सुन्न न होखहि हंस उबारा ॥
सुन्न न धरती सुन्न न पानी। सुन कतहीं नहि देखिये ज्ञानी॥
सब महँ देखिये सब्द का पूरा। चिन्हे बिना जम देत है सूरा[१] ॥
मुक्ति पदारथ खोये गँवारा। समुझि लेहु भेद निजु सारा ॥
करनी काम सकल संसारा। करनी कथहि काम बिस्तारा ॥
करनि काम कामिनि के साथा। बिनु चीन्हे नहि होहि सनाथा॥
साखी—कवन लोक ओइ अचल है, (जहँ) हंसा करहिं कलोल।
जहँ सीतल सब्द उचारहीं, भौ हीरा अनमोल ॥
अभय लोक ओइ अचल है, जहँ अजरा जोति बराय[२]।
साहब सत सामरथ हहिं, दरिया कहै बुझाय ॥

॥ चौपाई ॥

भवसिंधुत्रिविधबिकार जल भारी। सत्तनाम निजु सबद बिचारी॥
कथा कबीर जगत महँ भारी। हारे पंडित बेद पुकारी ॥
बेदै अरुझि रहा संसारा। मृतक अंध परलय तब डारा ॥
चोर चोराय सबै जिव खावै। चोर चिन्हें तबहीं सुख पावै ॥
आपु निरंजन सकल पसारा। फंद दंद करम रचि डारा ॥
तीनो लोक निरंजन राई। चौदह चौकी जम बैसाई ॥
एको हंस न होखहि पारा। बीचहिं भसम करै जरि छारा[३] ॥
काया कबीर कीन्ह पैसारा। छप लोक कै राह सिधारा ॥

(१) शूल। (२) बलती है। (३) राख।

साखी—हारे जम सतनाम से, (हाथ) डंडा दिन्हों डारि ।
अमर लोक कहँ जाइ हैं, संत न आवहिं हारि ॥

॥ चौपाई ॥

कवने देस हंस चलि जाई । भवजल जल तो अगम गोसाँई ॥
बड़ा जगाती भवजल पीरा । कवनि जुगति कै दीजे बीरा[१] ॥
जोग जुगति भेद पहिचानी । उपजै प्रेम भगति निजु ज्ञानी ॥
होय हीरा तब निर्मल बानी । भगति निरंतर हिरदय ठानी ॥
सब्द बिचारि ज्ञान करि थीरा । सत्त सुकृत का देवै बीरा ॥
देवै परवाना सत कै बानी । चरनाअमृत लेवै मानी ॥
सार सबद चीन्हो चित लाई । छप लोक सबद पहुँचाई ॥
अति सुख सागर कहा न जाई । जो जानै अमृत फल पाई ॥

छंद—अति सोभा सुंदर प्रेम मंगल, गगन में झरि लावहीं ।
अति झलाझल जोति निर्मल, ज्ञान को गुन गावहीं ॥
अजर अम्मर हंस बन्स तहँ, मोती मनी चित चुंगहीं ।
जरा मरन तें रहित अम्मर, बहुरि न भवजल आवहीं ॥

सोरठा—सतगुरु ज्ञान बिचारि, अम्मरपुर संसय नहीं ।
भगति करै नर नारि, दयावंत सम दृष्टि हहिं ॥

साखी—दिल दरिया दरसन देखिये, अंजन करु गुरु ज्ञान ।
अगम निगम गति कंठ है, बिमल चरन चित ध्यान ॥

॥ चौपाई ॥

ज्ञान बिराग बिबेक बिचारा । सहज सुरति भव सिंधु उबारा ॥
आतम दरस ज्ञान जब होई । ब्यापक ब्रह्म देखै सत सोई ॥
प्रतीबिंबु घट परगट अहई । इमि करि ब्रह्म ज्ञान मत कहई ॥
जहँ देखै तहँ आतम दरसी । मानो मोद सील की अरसी[२] ॥
जहँ देखै तहँ नाम अनूपा । मानो दरसन दरस सरूपा ॥

---

(१) दूसरा पाठ ऐसे है—"बड़ पीड़ा जग मग कै थाना । कवनि जुगुति दीजै परवाना" ॥ (२) आरसी ।

ओइ निर्गुन रहित सम तूला[१] । अछय बृच्छ मनि मंगल मूला ॥
काटै करम कपट नहिं राखै । उर अंतर मुख नामै भाखै ॥
साखी—भव सिंधु त्रिबिध बिकार जल, बोहित[२] सुकिरित साथ ।
गुरु सतगुरु करु कनहरी,[३] खेवनि वाके हाथ ॥

॥ चौपाई ॥

तब नहिं करता किरतम कीन्हा । तब नहिं निगम नेति अस चीन्हा ॥
तब नहिं छीत[४] न सेस महेसू । तब नहिं सुरसरि आदि गनेसू ॥
तब नहिं दिनमनि[५] इंदु[६] प्रगासू । तब नहिं उड़गन[७] गगन निवासू ॥
तब नहिं दाया धरम प्रसंगा । तब नहि उतपति तब नहि भंगा ॥
तब नहि जग्य जोग नहि जापा । तब नहिं मुक्ती तब नहिं पापा ॥
साखी—अब कछु उतपति करन चहे, चिंता चेतनि चीन्ह ।
नारि पुरुष रस रंग में, एह कछु इच्छा कीन्ह ॥

॥ चौपाई ॥

मनसा रूप कामिनि जो कीन्हा । अष्टभुजी छबि छेकै लीन्हा ॥
देखत रूप निरंजन अँजेऊ[८] । लोभ छोभ सादर सुख सजेऊ ॥
देखत पल भरि रहा न गयऊ । नयन प्रेम सुख बहुतै भयऊ ॥
जब कामिनि से भौ परसंगा । उपजे मनमत भाव अनंगा[९] ॥
तेहि महँ तीनि देव जो भयेऊ । ब्रह्मा बिस्नु महेसुर कहेऊ ॥
तेहूँ तीनि भाग तब कीन्हा । कन्या तीनि ततच्छन[१०] दीन्हा ॥
माया चरित को चित्त चलावै । भरमि मोह तिनि देव मतावै[११] ॥
आप निरंतर जोति होइ जागी । सेवा करहि भोग रस लागी ॥
ब्रह्मा की ब्रह्माइनि जानी । बिस्नू की बिस्नुआइनि रानी ॥
संकर के देवी सँग भयेऊ । त्रिबिध ज्ञान तीनिउ मिलि ठयेऊ[१२] ॥
साखी—निगम चारि उतपति भयो, चतुरानन[१३] मुख बैन ।
उचरेउ सब्द अनाहदा, झंझकार मद ऐन ॥

---

(१) दूसरी पुस्तक में 'सूला' है । (२) नाव, लग्गी । (३) माँजी, पतवारवाला । (४) पृथ्वी । (५) सूरज । (६) चाँद (७) तारा । (८) रीझे । (९) कामदेव । (१०) तुर्त । (११) आधीन हो जाय । (१२) ठाना । (१३) ब्रह्मा ।

निरंकार नहिं अहै अकारा । सोइ बिरंचि अस कीन्ह बिचारा ॥
नहि मुख स्रवन नैन नहिं बाता । अस कै कहेउ बिरंचि बिधाता ॥
नहिं दुख सुख नहि ब्यापक माया । (सो) अहै बिदेह धर्म नहिं दाया ॥
बिनु पग चलै सुनै बिनु काना । बिनु कर निरति बेद करि जाना ॥
बिनु चछु[१] देखै सप्त पताला । बिनु पूरन[२] परगट है काला ॥
कहै बिरंचि बेद अस भाषा । मूल न डार पत्र नहिं साखा ॥
ऐसन ज्ञान भ्रमत सब लोका । (भव) सिंधु बिकार परा बड़ सोका ॥
बिनु मगु चलै बहुत दुख पावै । बिनु देखे कहु केहि गोहरावै ॥
बिनु परचै कैसन परनामा । बिनु बपु[३] धरे बसै केहि ग्रामा ॥
साखी—अकार रहित निरंकार है, कह्यो सो भेद अभेद ।
टुटो फुटो उर नैन ओइ, बिरह बिराग न छेद ॥

॥ चौपाई ॥

(ओइ) ब्रह्म सँपूरन सर्ब बिराजै । अपनै छत्र अवर सिर छाजै ॥
दया सिंधु सुख सर्ब सरूपा । बसै निरंतर सुर नर भूपा ॥
सुनै स्रवन मुख अमृत आमी । तीनि लोक महँ अंतरजामी ॥
मल रहित मनोहर सुंदरताई । अछै असोक सुख संतत[४] गाई ॥
बिमल बिरोग ओइ भरम निकेता[५] । (ओइ) परचिंता चिंतामनि हेता ॥
निमिख लोचन जेहि जन पर लागा । भव सिंधु सुख सहजै पगु पागा ॥
(ओइ) जीवन मुक्ति जिद जग मूला । मातु पिता नहिं मया अँकूला[६] ॥
निर्गुन सर्गुन दुनहुँ तें न्यारा । सत सरूप ओइ बिमल सुधारा ॥
एह निजु भेद बूझिहै सोई । हिरदय अँकुर ज्ञान जब होई ॥
सतगुरु ज्ञान दिपक जब लेसै । बस्तु अनूपम सुरति सुरसै ॥
(एह) पाँच तत्तु तन सुंदर देखा । निजु गहि प्रेम प्रीति सतरेखा ॥
मोहिं से कहन कहेउ जग माहीं । तदपि कहा बिनु रहा न जाही ॥
जन नायक तुह निर्गुन निरंता । होहिं सनाथ सुमिरहि सब संता ॥

(१) आँख । (२) संपूर्ण अंग । (३) शरीर । (४) सदा । (५) अलग । (६) अंकुर ।

मैं कुमुदिन तुम पूरन चंदा । मैं अधीन करु परम अनंदा ॥
मैं चकोर तुम दृष्टि अनूपा । चुँभेउ प्रेम रस पलक सरूपा ॥
छंद–सब तेजि[1] भर्म बिकार जग को, संत सदा गुन गावहीं ।
कंज पुंज रस मोदि मधुकर, सर सरोज पर धावहीं ॥
लै लपटि लागै ग्रानि घन में, अमृत छबि तहँ छावहीं ।
दरस दरिया परसु चरनै, चंद चकोर पद पावहीं ॥
साखी–पद पंकज करु ध्यान, मनि आगे दीपक कहा ।
सुनहू संत सुजान, सुखद सदा इमि करि लहा ॥

॥ चौपाई ॥

जिन्ह नहि बिमल चरन चित आना। मर्कट होइ के भरमि निदाना॥
सुनत स्रवन संका नहि आना । होइ भुवंग बिष करहि अपाना॥
लोचन ललचि नाम नहि पेखा । नैन बिहून किर्म के लेखा ॥
भगति हेतु सुमिरै जो प्रानी । मिलै बिमल रस अमृत सानी ॥
(जौं) संत दरस पद पावन करई । (तौ) चिंतामनि चिंता सब हरई ॥
सुनै स्रवन अमि अंतर राखै । लोचन ललचि नाम रस चाखै ॥
रसना रसि बसि अमृत पीवै । या जग माँह सोई जन जीवै ॥
सतगुरु ज्ञान से लोचन लोचै । हरै सबै कलिमल अघ मोचै ॥
समुझि सुमिरु गुन साहब नीका । सब से सरस भालमति टीका ॥
जौं तरनी[2] जल जाह तराई । नाम सुमिरु जल बोहित[3] पाई ॥
साखी–पदुम प्रगास मधु पति पद पावन, लगेउ चरन चित मोर ।
बिलिगि फिरि बिहरि उलटि कंज पर, फनि मनि करत न भोर[4] ॥

॥ चौपाई ॥

करम जोग जम जीते चहई । चढ़ि पिपीलका[5] फिरि भव रहई ॥
बीहंगम[6] चढ़ि गयउ अकासा । बइठि गगन चढ़ि देखु तमासा ॥
महा मुंदरा उनमुनि पेखै । अनन्नि[7] भाँति मोती तहँ देखै ॥
छटा चमकि बरिसै घन ग्रानी । परिमल अग्रबास रस सानी ॥

(१) छोड़ कर । (२) नाव । (३) लग्गी । (४) साँप अपने मनि को भूलता नहीं । (५) चींटी । (६) पच्छी । (७) अनेक ।

इँगला पिंगला सुखमनि घाटा। (तहँ) बंकनाल रस पीवै बाटा॥
खोड़स दल कँवल बिगसाना। लपटि लगै मधुकर ललचाना॥
सलिता तीनि संगम तहँ भयऊ। बारि बयारि अमृत रस पयऊ॥
चंद सूर दुइ करहिं बिलासा। उदय अस्त फिरि होय प्रगासा॥
इँगला चंद्र बाहनी कहिया। पिंगला भानु प्रगासित अहिया॥
साखी—चारि अवस्था तीनि गुन, पाँच तत्तु है सार।
प्रेम तेल तुरी[1] बरी, भयो ब्रह्म उँजियार॥

॥ चौपाई ॥

एदुइ चक्र भरमते लोका। कामिनि कनक महा बड़ सोका॥
उभय[2] त्यागि समरथ है दूजा। ता को चरन कमल का पूजा॥
तेजि कंदर्प[3] कामिनि नहिं साथा। सुमिरु नाम निजु होइ सनाथा॥
जो जन समरथ सदा सहाई। मुक्ति समीप सदा फल पाई॥
ओइ परचै नाम भजै ब्रह्मंडा। दानव दनुज पाप सतखंडा॥
नाम प्रताप जुग जुग चलि आवै। सकल संत गुन महिमा गावै॥
संत रहनि भव बारिज बारी। सदा सुखी निरलेप बिचारी[4]॥
जल कुकुही जल माहिं जो रहई। पानी पर कबहीं नहि लहई॥
दही मथे घृत बाहर आवै। फिरि के घृत नहिं उलटि समावै॥
फुल बासे तिल भया फुलेला। बहुरि तील तेल नहिं मेला॥
इमि कर संत असँत गुन कहई[5]। भौ निकलंक नाम गुन गहई॥
औघट घाट लखै सो संता। सो जन जानु सदा गुनवंता॥
अजपा जाप अनाहद नादा। तजि भव भर्म सो बादि बिबादा॥
अमृत बुन्द तहँ झरै निकंदा। औन[6] अँजीर[7] मगन मन चंदा॥
साखी—मनि मानिक दीपक बरे, उनमुनि गगन प्रगास।
मन मोदिक[8] मद तेजि के, मेटु जरा मरन जम त्रास॥

---

(१) एक अवस्था का नाम। (२) दोनों। (३) कामदेव। (४) संत संसार में ऐसे निर्लेप रहते हैं जैसे कँवल पानी में। (५) दूसरे पाठ में "लहई" है। (६) घर। (७) आँगन। (८) हर्ष।

॥ चौपाई ॥

सुक सारद नारद मुनि गावे । सो सतगुरु पद प्रगट देखावे ॥
सेस सहसमुख बोलै बानी । सतगुरु महिमा तेहुँ न बखानी ॥
संत साध मिलि करहिं बखाना । केवल निर्भय नाम अमाना ॥
माया चीन्है संत है सोई । ज्ञान भगति का करै बिलोई[१] ॥
जो माया जग करै बिनासा । भौचक परै भरमि भव त्रासा ॥
आवै जाय जगत करि अपना । ज्यौं किसान खेती का जतना ॥
जब चाहै तब लावनि लावै । जोंति बोइके फिरि उपजावै ॥
जैसे चिक[२] अजया प्रतिपाला । बहुत जतन कै कीन्ह निहाला ॥
स्वारथ स्वाद जानि कै मारी । एहि बिधि काल करै रखवारी ॥
सतगुरु सबद जान परबीना । पाय परम पद होहु अधीना ॥
भव संसय सब जाहि ओराई । सकल सृष्टि जेहिमाहिं देखाई ॥
सतगुरु सत्त नाम लव लीना । मद मोदिक कै मद भौ छीना ॥
नाम पिऊखन[३] अमृत चाखै । उर अंतर मुख हिरदय राखै ॥

साखी—जब सतगुरु पद पाइया, मिटि भव भरम उदास ।
मोह सागर सब सूखिया, छुटि तम तेज प्रगास ॥

छंद—हंस बन्स गति मान सरवर, चुँगत चित मोती घनी ।
पय पाय बिबरन बरन बिलगेउ, सँस्रित जल अमृत कनी ॥
मन देखि बिचारि सब लोभ लालच, सुमिरु नाम निर्गुन धनी ।
कहैं दरिया दरस सतगुरु, कंज पुंज अमृत सनी ॥

सोरठा—पद पंकज करु ध्यान, बिषै बिकार सब परिहरो ।
दूजा कोइ नहिं आन, सत्त सबद जाके बसो ॥

॥ चौपाई ॥

राम जोति जग सब केहु जानी । कृस्न रूप कमला सँग रानी ॥
रोग दोष सुख भोग बिलासा । करुना काम बाम गृह बासा ॥
जेहि माया सुर नर मुनि नाचा । बपु धर धरनि केऊ नहि बाचा ॥

---

(१) मथन । (२) कसाई । (३) अमृत ।

देही धरि सब खोजहिं पंथा । मया अथाह किमि होहिं सनाथा ॥
बूड़त भव में उभि उभि[1] जावै । जेहि नहिं सतगुरु ज्ञान समावै ॥
कबि बरनी करनी पद पावन । रहनि बिसोक रोग दुख दावन ॥
चिन्हे बिना कबि बहुत भुलाना । ज्ञान बिराग बिवेकन जाना ॥
स्वारथ स्वाद सबै कोइ आना । माया रूप सो ब्रह्म बखाना ॥
मन मरले सिव संकर जोगी । मन रखले इंद्राजित[2] भोगी ॥
कृस्न राम मनही को रंगा । मन तें उतपति मन तें भंगा ॥
मनहीं चीन्हि परम पद पावै । मन तजि जोगी जग समुझावै ॥
साखी—दधिसुत[3] से अमृत पयो, रबि सुत आउ न पास ।
चला मार्ग ब्रह्मंड के, पूरन प्रेम प्रगास ॥

॥ साखी ॥

तन सरवर मन देखु बिचारी । ता में सलिता तीन सुधारी ॥
वा में मानसरोवर अहई । हंस बंस कौतुक तहँ करई ॥
चूँगहिं मोती निर्मल नीका । झलकि परै मनि मस्तक टीका ॥
हंस बंस गुन ज्ञान गँभीरा । नीर छीर बिबरन करि थीरा ॥
काग कपूत करम बहु हीना । भछै कुबास मीन मुख लीना ॥
हंस कौतुक देखि भयउ मलीना । निर्मल संत मंत जग भीना ॥
साखी—जौं लगि दया न ऊपजे, सम जुग जाहिं अनंत ।
तौं लगि भगति न प्रेम पद, सुकृत सोक बिनु कंत ॥

॥ चौपाई ॥

सर्गुन निर्गुन तन करो बिचारा । करो निषेध बेद निरुवारा ॥
निर्गुन तो बिनसै नहिं भाई । अजर देह अम्मर सुखदाई ॥
सर्गुन सों बन्धन में लागा । मुनि बैराग जोग सब जागा ॥
(ओइ) ओंकार तें प्रगटी माया । सोई नंद घर कृस्न कहाया ॥
हतेउ कंस जिन्ह बान बिसाला । बलिहिं बाँधि जिन्ह दीन्ह पताला ॥
सो माया जग चिन्है न कोई । परा अथाह बेद[4] मति सोई ॥
आवै जाय बिसंभर देवा । जो जन जानि बिचारै भेवा ॥

(१) घबराना । (२) इंद्रादिक ? । (३) चंद्रमा । (४) दूसरी पुस्तक में पाठ "भेद" है ।

सो लीला उन्ह रचो बनाई । गोप सखा सँग गाय चराई ॥
जो भग तें आये भगवाना । ब्रह्म ज्ञान बेद मति जाना ॥
पारबती को जब भौ ज्ञाना । महादेव को पूँछेउ जाना ॥
एह माया की ब्रह्म अमाना । महादेव मोह करि जाना ॥
आदि ब्रह्मा अहै भगवाना । इनकर भेद कहेउ निजु ज्ञाना ॥
बोध करी इमि कहि समुझाई । संकर बहु बिधि कथा सुनाई ॥
जा की जोति जग परगट अहई । जोगी मुनि ज्ञानी सब कहई ॥
एह चरित्र बिरले पहिचाना । सुनु देवी निजु ज्ञान बखाना ॥
जगदम्बहिं अस्थिर तब कीन्हा । आदी ब्रह्म राम कहि दीन्हा ॥
माया चरित मोह भगवाना । मुनि पंडित सब ज्ञान बखाना ॥
जब सतगुरु पद परचै पावै । मया चरित सहजै बिलमावै ॥
साखी—अहिपति सुरपति कामरिपु, सारद औ सुकदेव ।
कहत बितेऊ जुग कल्प लहि, ज्ञान बिराग बिभेव ।

॥ चौपाई ॥

ओइ तिरगुन तें रहित अमाना । ज्ञान गम्मि बिरले पहिचाना ॥
(ओइ) जरै मरै नहिं आवै जावै । प्रान पिंड सत पुरुष कहावै ॥
सतगुरु प्रेम पिऊखन पावै । ज्ञान रतन मनि सो जन गावै ॥
अखंडित ब्रह्म पंडित जन ज्ञाना । दुइत ब्रह्म जीव पर राता ॥
तुचा[1] ज्ञान इमि स्वारथ अहई । ब्रह्म ज्ञान निरुपन कहई ॥
अनुभौ ज्ञान बिरला जन जाना । माया की गति नहिं पहिचाना ॥
उग्र ज्ञान जब जन कै होई । संसय रहित अमरपुर सोई ॥
साखी—स्रवन ज्ञान चित में बसे, संध्यासन[2] करु नेम ।
कहे सुने हिय में बसे, दरिया दरसन प्रेम ॥

॥ चौपाई ॥

बिनु देखे दुख दारुन पावै । बिना ज्ञान भवचक[3] में आवै ॥
बिनु परचे जम सासन करई । सहै सूल बुधि बल सब हरई ॥
संत निकट बिनु निपट दुखारी । मरकट मुठी जम जाल पसारी ॥

---
(१) बाहरी । (२) सिध्धासन और पद्मासन अष्टांग योगमें श्रेष्ठ आसन हैं । (३) भवचक्र ।

निकट फंद चीन्है नहिं कोई । ज्यों मृग मद तें आँधर होई ॥
अमर लोक बसि[1] काल बिसाला । निकट बसे बूझो जम जाला ॥
अमृत तजि बारुन[2] करि पाना । नाम भजन बिनु बिषधर ज्ञाना ॥
जाके दया धरम नहिं राता । जम जालिम जिव करु उतपाता ॥
छंद—जिवन जन्म असाध नर को, नर्क नारा में बहै ।
जन चीन्हि बीनि बिचारि के, कलि कर्पाट जाके सो अहै ॥
जम सासना कसि मुसुक चढ़ि, बसि काल के घर जिव दहै ।
कहैं दरिया दरस बीना, परस काको दुख सहै ॥
सोरठा—सतगुरु बचन प्रमान, जो जन चाहै मुक्ति फल ।
सुनो स्रवन निजु ज्ञान, उर अंतर जबहीं बसै ॥

॥ चौपाई ॥

यह मन आदि अंत चलि आवै । एह मन सुर नर मुनिहिं नचावै ॥
मन चिन्हला बिनु बड़ दुख पावै । मन चिन्हला बिनु मूल गँवावै ॥
मनचिन्हु मनचिन्हु ज्ञान सँजोगी । मन चिन्हला बिनु होहु बियोगी ॥
मन के सिव बिरंचि सब लागे । मनहीं के जोगी जग जागे ॥
मनहीं बेद कितेब सुनावै । मनहीं षटदरसन सब धावै ॥
सतगुरु भेद बुझहु निजु बानी । एहि खोजे होय निर्मल ज्ञानी ॥
बोलता ब्रह्म दिसै निजु सोई । ज्यों दरपन में प्रतिमा होई ॥
एह देखै तब वा कहँ देखै । ब्रह्म दिढ़ाय दृष्टि महँ पेखै ॥
ओइ नहिं मरै जिवै नहिं जाई । जाकर अंस सब ब्रह्म कहाई ॥
ओइ निर्लेप माया नहिं हेता । एह तिरगुन है बीज जो खेता ॥
(ओइ) बिमल सरूप सुधारस सानी । पद पहिचानहु निर्मल ज्ञानी ॥
साखी—अदुइत ब्रह्म बिराग मत, ब्रह्म ज्ञान निर्लेप ।
आपु चिन्हे औरे चिन्है, आतम दरसी देव ॥

॥ चौपाई ॥

मन परमेसर मन है राजा । मनहिं तीन लोक महँ छाजा ॥

(१) दूसरे पाठ में "कसि" है । (२) शराब ।

एइ मन करता बिस्नु कहावै । मनहि बिसंभर बिसु[1] पर आवै ॥
मनहीं अनल अकास प्रगासा । मनहीं पाँच तत्तु का बासा ॥
मनहिं समीर[2] बारि धन फेरै । मनहीं छटा गरजि घन घेरै ॥
मन जनमे नव बार गोसाँई । अनँत रूप मन कला देखाई ॥
छंद–मनै चलावे खंज मीन ज्यों, मन उड़गन[3] गगन सोहावही ।
मन अनल अनिल मन भँवर भर्मित, कंज पुंज पर आवही ॥
मन कर्म कर्ता काम कामी, बाम धाम छबि छावही ।
मन निसि बासर सोवत सपना, सर्ब रूप बनि आवही ॥
सोरठा–मन संसय सागर भयो, बूड़त अगम अथाह ।
चढ़ु सतगुरु सब्द जहाज,[4] उतरि जाय भव पार ॥

॥ चौपाई ॥

जिन्ह सत पद खोजा चितलाई । निकट नाम निजु ज्ञान समाई ॥
आतम दरस ज्ञान जब बूझै । प्रेम मगन होइ अपनै सूझै ॥
तत्तु तिलक मनि मुद्रा फेरै । अनहद धुनि मुरली तहँ हेरै ॥
(एह) अजपा संध्या तरपन करई । गयत्री ज्ञान गम्मि मति लहई ॥
पल पल सुमिरि प्रेम रस पीजे । मनि मुकुता तहवाँ चित दीजे ॥
चंद सूर दुइ परचै भयेऊ । सलिता तिनि संगम तहँ रहेऊ ॥
कुंभ पत्र[5] तहवाँ भरि पीवै । ब्रह्म दृढ़ाय तहाँ सुख जीवै ॥
मंगल मूल है रहनि बिसोका[6] । धरमराय दर कबहि न रोका ॥
अनन्त एक महँ रहा समाई । सतगुरु ज्ञान जबै होय जाई ॥
साखी–बारि उपर बारिज कही, अलि कलि देखि लोभाय ।
(जब) भानु कला परगट भया, कंज सुबास सोहाय ॥

॥ चौपाई ॥

मातु पिता सुत बंधो भगिनी । अपने मगु में सब कोइ मगनी ॥
घटत छिनहि छिन जात ओराई । हृदय बिबेक ज्ञान नहिं आई ॥
(सब) भूले सँपति स्वारथ मूढ़ा । परे भवन में अगम अगूढ़ा ॥

(१) संसार । (२) हवा । (३) तारा । (४) तीसरी पुस्तक में पाठ यह है—"सतगुरु दया तरिनी दियो" । (५) पात्र, बर्तन । (६) बिना शोक के ।

संत निकट फिनि जाहिं दुराई । बिषय बास रस फेरि लपटाई ॥
अब का सोचसि मदहिं भुलाना । ज्यौं सेमर सेइ सुगा पछताना ॥
तब तो कहेव जो सबै यगाना[१] । बंधु भाय औ दरब खजाना ॥
मरन काल कोइ संग न साथा । जब जम मस्तक दीन्हो हाथा ॥
मातु पिता धरनी[२] घर ठाढ़ी । देखत प्रान लियो जम काढ़ी ॥
धन सब गाढ़[३] गहिर जो गाड़े । छूटेउ माल जहाँ तक भाँड़े ॥
भवन भया बन बाहर डेरा । रोवहिं सब मिलि आँगन घेरा ॥
खाट उठाय काँध करि लीन्हा । बाहर जाय अगिनि जो दीन्हा ॥
जरि गइ खलरी भस्म उड़ाना । दिना चारि सोच कीन्हो ज्ञाना ॥
फिरि धंधे लपटाना प्रानी । बिसरि गया ओइ नाम निसानी ॥
खरचहु खाहु दया करु प्रानी । ऐसे बुड़े बहुत अभिमानी ॥
सतगुरु सबद साँच एह मानी । कह दरिया करु भगति बखानी ॥
भूलि भरमि एह मूल गँवावै । ऐसन जनम कहाँ फिरि पावै ॥
धन संपति हाथी औ घोरा । मरन अंत सँग जाय न तोरा ॥
एह तन दाह अगिनि में जरिहै । भस्म उड़ाय नाहिं फिरि हेरिहै ॥
(एह) मातु पिता सुत बंधो नारी । ई सब पाँवरि[४] तोहिं बिसारी ॥
मेटिहै बिसमय होइहि अनन्दा । तिलांजुली दे करिहैं गंदा ॥
साखी—कोठा महल अटारिया, सुनेउ स्रवन बहु राग ।
सतगुरु सबद चीन्हे बिना, ज्यों पंछिन महँ काग ॥

॥ इति ॥

भदों बदी चौथि वार सुक्र, गवन कियो छप लोक ।
जो जन सब्द बिबेकिया, मेटेउ सकल सब सोक ॥
संबत अठारह से सैंतीस, भादों चौथि अँधार ।
सवा जाम जब रैनि गो, दरिया गौन बिचार ॥

---

(१) अपना । (२) स्त्री । (३) गड़हा । (४) नीच ।

॥ समाप्त ॥